Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन ज्ञान
साप्ताहिक

११ अप्रैल, १९७६
मूल्य ५० पैसे

स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।

—लोकमान्य तिलक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(आचार्य श्री पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति)

हे मनुष्य !

छिपी हुई उस ज्योति का पता लगा, तेरी आत्मा में दिव्य उषा खिल उठेगी !

ओं त इद्देवानां सधमाद आसन्नृतावानः कवय पूर्व्यासः।
गूळं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन्त्सत्यमन्त्रा अजनयन्नुषासम् ॥

अर्थ—(ते) वे (इत्) ही (देवानां) दैवों के (सधमादः) साथ मिलकर आनन्द भोगने वाले (आसन्) होते हैं, जो कि ऋतावानः सत्य के अनुसार चलने वाले (कवयः) तत्वदर्शी विद्वान् (पूर्व्यासः) सब गुणों में (सत्यमन्त्रः) सबको सत्य के अनुसार चलने की सलाह देने वाले (पितरः) पालक पिता जैसे बनकर (गूळं) छिपी हुई (ज्योतिः) परमात्मरूपी ज्योति को (अन्वविन्दन्) प्राप्त कर लेते हैं, और इस प्रकार जगत् में (उषासम्) आध्यात्मिक उषःकाल को (अजनयन्) प्रकट कर देते हैं।

वेद में उषा देवता के बहुत से सूक्त आते हैं। पौराणिक और उनकी राह पर चलने वाले योरोपीयन भाष्यकार कहते हैं कि इन सूक्तों में उषःकाल का वर्णन है। प्रातःकाल सूर्योदय से पहले और पीछे आकाश में जो लालिमायुक्त सुहावना प्रकाश छा जाता है उसको लेकर ही इन सूक्तों में कविता की गई है। इसके सिवा इन सूक्तों में मनुष्य के लिए उपयोगी शिक्षा का उपदेश नहीं है। इन लोगों की यह धारणा भ्रान्त है। इन सूक्तों में उषःकाल का वर्णन तो अति गौण है वह मुख्य वर्णनीय विषय नहीं है। इनमें तो जिस उषा का मुख्य वर्णन है वह आध्यात्मिक उषा है। और उषा को लाने वाले जिस सविता (सूर्य) का वर्णन है वह सबको उत्पन्न करने वाला, जीवन और गति देने वाला, भगवान् है। उषःकाल की वेला प्रभु भक्ति के लिये, अपने अन्दर आध्यात्मिक भावनाओं को जगाने के लिये सबसे उपयुक्त समय है। इस समय का आध्यात्मिकता के साथ कुछ विशेष सम्बन्ध है। उषा देवता के सूक्तों में उषा का वर्णन केवल हमें आध्यात्मिक उषा के ऊँचे क्षेत्र में उठा ले जाने के लिये एक सहायक के रूप में किया गया है। उषःकाल में आकाश में, भूमि पर, दिशा-उपदिशाओं में जो एक अद्भुत शोभा छा जाती है; उस समय चहचाहते हुये पक्षी जो एक दिव्य राग अलापने लगते हैं; पूर्व दिशा में तप्त सुवर्ण-सा जो सूर्य मण्डल-सा आ चढ़ता है और अपने पिघले हुए सुवर्णमय आभा-पुञ्ज से विश्व भर को आरञ्जित कर देता है; इस सब को देख कर सात्विक भक्त-हृदय में अध्यात्म-भावनायें उठने लगती हैं और वह विचार में मग्न होकर उषा की इन सब विभूतियों के नीचे छिपी हुई गूढ़ एक दिव्य ज्योति को निहारने लगता है। उसे सर्वत्र प्रभु का ही प्रकाश दीखने लगता है। सर्वत्र भगवान् ही भगवान् दृष्टिगोचर होने लगते हैं। उसके हृदय में एक नवीन आध्यात्मिक उषा छा जाती है। उसे सारा संसार इसी उषा के रंग में रंगा हुआ दिखाई देने लगता है। यह आध्यात्मिक उषा का प्रकाश जिस हृदय में हो जाता है उसकी मानसिक वृत्ति कैसी होती है उसी का चित्र इन उषा देवता के सूक्तों में खींचा गया है। इसी आध्यात्मिक उषा पर उषा देवता के ये सूक्त अधिक अच्छी तरह से घटते हैं। आधिदैविक उषा पर उषा देवता के अनेक वर्णन संगत ही नहीं होते। ऊपर जो मन्त्र दिया गया है वह एक उषा देवता के सूक्त का ही है। इसमें छोटे-छोटे भाव-भरे शब्दों में जो उपदेश दिया गया है उस पर आप मनन कीजिये। मन्त्र में जो कुछ कहा गया है उसे गम्भीरता के साथ देखने पर आप देखेंगे कि वह वर्णन आधिदैविक उषा पर घट ही नहीं सकता। यह वर्णन आध्यात्मिक क्षेत्र में ही घट सकता है। और इसलिए यहां उषा से आध्यात्मिक उषा ही लेनी चाहिये। अस्तु।

देवों के साथ मिल कर आनन्द का उपभोग कौन कर सकते हैं? इसका उपदेश मन्त्र में किया गया है। यहां मुक्त आत्माओं के साथ मिलकर मोक्ष आनन्द का उपभोग करने से अभिप्राय है। **यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरन्त**' 'प्रार्थना मन्त्र' के इस अंश में जिस अमृत-भोग का वर्णन है उसीकी ओर प्रस्तुत मन्त्र में इशारा है। देवों के साथ मिलकर इस अमृत का भोग कौन कर सकते हैं? उत्तर में कहा कि जो '**गूढं ज्योतिः अन्वविन्दन्**' छिपी हुई परमात्मरूप ज्योति को प्राप्त कर लेते और इस प्रकार **उषासम् अजनयन्**' अपने अन्दर उषा को पैदा कर लेते हैं। वह छिपी हुई ज्योतिः प्राप्त कैसे हो सकती है जिसके प्राप्त होने पर हमारे अन्दर उषा छा जायेगी? इसके लिये कहा 'ऋतावानः', मन वचन और कर्म से सत्य पर आचरण करने वाले बनो! सत्य का पालन नहीं हो सकता जब तक हम स्थिति को पूरी तरह समझते न हों इसके लिये कवयः'—तत्वदर्शी ज्ञानी बनने की आवश्यकता है। एक दिशा में ही ज्ञानी बनने से काम नहीं चल सकता। हमें सभी पहलुओं में ज्ञानवान् बनना होगा। तभी हम स्थिति को पूरी तरह समझकर सत्यारूढ़ हो सकते हैं। इसलिये कहा, 'पूर्व्यासः' हमें अपने आपको पूर्ण बनाना चाहिये। सत्य-असत्य व्यवहार की समस्या विशेष रूप में तब उत्पन्न होती है जब हम दूसरों के साथ सम्पर्क में आते हैं। अकेले और केवल

(शेष पृष्ठ ६ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

ओ३म्

जनज्ञान

वेदः

हिन्दी साप्ताहिक नई दिल्ली

वर्ष १ ● रविवार ११ अप्रैल १९७६ : ३० चैत्र २०३२ ● अंक ९

सम्पादक
राकेश रानी
●
सह-सम्पादक
कु० आभा
दूरभाष : ५६६६३९
: २०१५८४
●
पता :
वेद मंदिर
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१, नाईवाला]
करोल बाग, नई दिल्ली-११०००५
●
वार्षिक मूल्य २०)
विदेश में ५ पौंड : हवाई डाक से
३ पौंड : समुद्री डाक से
आजीवन ३०१ रु०
●
दयानन्दाब्द । १५१
सृष्टि संवत् । १९६०८५३०७६

नव वर्ष का संदेश

भारत के स्वर्णिम भविष्य के लिए काम करो

अज्ञान-अंधविश्वास-पाखंड और कुरीतियों पर प्रबल प्रहार करो

बलिदान दो इसलिए कि हमारा देश संसार का सबसे अच्छा देश बने

नयी दिल्ली। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को नए वर्ष की प्रथम संध्या में, राष्ट्र के नाम संदेश प्रसारित करते हुए भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्र नाथ ने कहा कि नया वर्ष द्वार पर खड़ा है। आओ, संकल्प लें, देश को पवित्र बना कर नया रूप देने का।

आपने कहा कि पाखंडों के गढ़ मजबूत होते जा रहे हैं। ढोंग और धोखा धर्म के नाम पर सर्वत्र दिया जा रहा है। धर्म केवल लोगों को बहकाने का साधन बन गया है, अतः आज पूरी शक्ति से सभी पाखंडों पर प्रबल प्रहार करें।

गुरुडम और अंध विश्वास आज प्लेग की तरह फैल रहे हैं। नकली भगवान और फसली गुरु भोली भाली जनता को बहका रहे हैं।

नाना मत-वाद मनुष्य की अज्ञानता के कारण बढ़ रहे हैं। मजहब ने धर्म के स्वरूप को भी कलंकित कर दिया है। ज्ञान के अभाव में अज्ञान ही उसके आसन पर विराजमान है।

पश्चिम का भौतिक दर्शन हमारी परंपराएं मिटा रहा है। परिवार नियोजन व्यभिचार का प्रतीक बन गया है। शराब, विलासिता और गुंडापन सर्वत्र छाया है।

ऐसे में भारत को नया रूप देने का व्रत ही नए वर्ष का प्रथम संदेश है। महर्षि दयानन्द ने जिस क्रांति की आधार शिला रखी थी, वह पवित्र अग्नि आज हमें फिर से धधकानी है।

भारत के प्रत्येक नागरिक को श्रेष्ठ मनुष्य, ईश्वर का पुत्र, आदर्श व्यक्ति बनाने के लिए संघर्ष करो। यत्न करो कि वह दिन शीघ्र आए जब हम गौरव से कह सकें कि हमारे देश में न चोर हैं, न डाकू, न शराबी हैं, न व्यभिचारी-मांसा हारी, न कोई झूठ बोलता है न धोखा देता है।

नया वर्ष हमारे भाग्योदय का संदेशा लाया है। आओ, हम सब काम में लग जाएं। ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपनी बात

प्यार की बातें : श्रद्धा के गीत

संसार युद्ध से नहीं प्यार से चलता है। युद्ध जलाता है, प्यार बसाता है। ममता के कारण मां पूजनीय है। स्नेह के कारण बहन वंदनीय है और प्यार दो अनजानों को एक बना देता है।

प्यार के सरगम की शक्ति कौन नहीं जानता। विश्व का आधा साहित्य इसी की महिमा गा रहा है। प्यार पवित्रता का सागर है। उसमें द्वेष नहीं, ईर्ष्या नहीं, कलुष नहीं, बस प्यार है। प्यार सब में गुण ढूंढता है।

"मैं" 'तुम' और 'वे' सब एक हैं। यह एकता का भाव बिना प्यार के कहां से आएगा? जीवन के संकट के क्षणों में एक यही तो सहारा है। पवित्र मन ही प्यार की गंगा प्रवाहित कर सकता है।

वासना प्यार नहीं है। वह तो स्वार्थ है। देह की भूख मिटाने का एक प्रवाह है। उसमें व्यक्ति देने की नहीं, लेने की कामना रखता है, इसीलिए वासना उठाती नहीं, गिराती है।

कामना प्यार के साथ रहती है। "सब का भला करो भगवान्" की भावाञ्जलि कामना है। प्यार इस का उद्गम है। कल्याण इस का लक्ष्य और निर्माण साधन है।

जो जिस से प्यार करता है वह उसकी हानि नहीं कर सकता। उस के लिए तो वह प्राण दे सकता है। स्वयं को मिटाकर दूसरे का उत्थान ही तो प्यार का पावन मंत्र है।

जीवन का आरम्भ प्यार से, विकास प्यार से, निर्माण प्यार से होता है, पर पता नहीं कहां से स्वार्थ जीवन का संचालक बन जाता है और प्यार के स्थान पर स्वार्थ का डेरा लग जाता है।

स्वार्थ मनुष्य को पशु बना देता है। उसकी देखने की शक्ति नष्ट हो जाती है। समझने की बुद्धि नहीं रहती। 'मैं' ही 'मैं' रह जाता है, 'तुम' और 'वे' कहीं भी तो नहीं रहते। तब प्यार की छाया से भी दूर रहकर मनुष्य स्वार्थ, अहंकार, क्रोध, द्वेष के चक्रव्यूह में फंस कर अपना सर्वनाश कर लेता है।

और परिणामस्वरूप उसका अपना जीवन भी नष्ट हो जाता है और दूसरों को भी वह विनाश के मार्ग पर ढकेलता है। स्वर्ग नरक में बदल जाता है, जब प्यार समाप्त हो जाता है।

हमें नहीं ज्ञान कि आप को किस से कितना प्यार है? पर तनिक अपने को टटोलिए तो सही और फिर देखिए आप कहां खड़े हैं।

क्या आपने कभी अपने से प्यार किया है, उस अपने से, जिसके न रहने पर आप के देह को एक क्षण भी कोई घर में न रखेगा। क्या आपने अपने परिवार से प्यार किया है? संसार में लाखों दुःखी हैं; क्या वे आपके इस विशाल परिवार के अंग नहीं हैं?

और सोचिए··· आप ने कभी अपने को भी जाना है? धन संग्रह में, लोक-पद संग्रह में आप भूले रहे पर क्या उसे भी जाना, जिसे जानने के लिए यह मनुष्य देह मिली थी?

आपने अपनी देह का दुरुपयोग किया, और भटक गए। प्यार का पाठ नहीं पढ़ा और बहक गए। मन पवित्र नहीं रहा तो प्रकाश कैसे मिलता?

सोचो और समझो···· प्यार के पथ पर चलना नहीं आया तो श्रद्धा के गीत कैसे गाते? क्योंकि श्रद्धा प्यार की उपज है। जो प्यार नहीं कर सकता वह श्रद्धा के भाव नहीं पढ़ सकता। श्रद्धा विहीन नर आपस में लड़ सकता है, संहार कर सकता है पर निर्माण कभी उसके पास नहीं फटक सकता।

"श्रद्धा" यज्ञ में नहीं, श्रद्धा प्रिय में नहीं, प्रभु में नहीं, जीवन में नहीं, आचार्य में नहीं तो परिणाम यही तो होगा जो हो रहा है।

लोग कहते हैं कि ये नेता पदों के लिए क्रूर पशुओं की तरह लड़ते हैं—ये कैसे आर्य हैं? हमारी दृष्टि में दोष इनका नहीं, इनके संस्कारों का है। इन्होंने सीखा है लड़ना, प्यार नहीं सीखा। झूठ बोलना, धोखा देना, पदों के लिए मुकद्दमे लड़ना यदि यही काम है, धर्म है तो फिर पाप क्या होगा, अपराध क्या होगा? हम चाहते हैं, एक बार फिर प्यार की गंगा बहानी और श्रद्धा के गीत समवेत स्वर में गाने।

झगड़े मिटें, द्वेष समाप्त हो और सब गले मिलकर एक हो जाएं, यह समय की मांग है। हम सब वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानने वाले एक साथ प्यार के बन्धन में बंध जाएं और श्रद्धा से अपना सभी कुछ वेद के प्रति अर्पित कर जीवन बदलें तो सचमुच देव दयानन्द के दिव्य स्वप्न साकार हो सकते हैं।

हम उन्हें भी प्यार करते हैं और आदर देते हैं जो हमें गालियां देते हैं, और हमें मिटाना चाहते हैं। हमारा कोई शत्रु नहीं, हमें सबसे प्यार है। इसलिए आओ, द्वेष जला दो। अपने मन में प्यार उत्पन्न करो, श्रद्धा का अमृत बरसेगा और दिव्य अमरता तुम्हारी चरण वन्दना करेगी।

—राकेश रानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

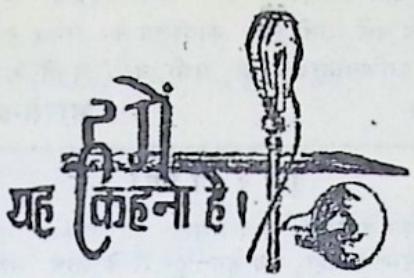

अब समय आ गया है कि—

हम यह सिद्ध करें कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।" पिछले १०० वर्षों में हमने निरन्तर 'वेद' के गीत गाए पर जनता को वेद से परिचित नहीं कराया। वेद प्रचार के नाम पर करोड़ों व्यय किया, किन्तु 'वेद' का प्रचार नहीं हुआ।

१९७३ से हमने 'वेद' के प्रचार का संकल्प लिया और आज १९७६ के आरम्भ में ३ वर्ष के भीतर १५,५०० परिवारों में वेद मन्दिर बनवाने में हम समर्थ हुए। अनुभव ने सिद्ध किया कि 'वेद' की पावन ज्ञान गंगा में स्नान के लिए भारत तरस रहा था, दोषी हम हैं—जिन्होंने 'वेद' का नाम लिया 'वेद' का प्रचार नहीं किया।

धन को तिजोरियों में बन्द करने की प्रवृत्ति ने हम में झगड़े और फूट को, पदलिप्सा को जन्म दिया। इसी तरह १०० वर्ष बीत गए। शताब्दी हम मना चुके—द्वितीय शताब्दी का प्रथम चरण आरम्भ हो चुका। हमारा निवेदन है कि आज समय आ गया है कि 'वेद' के सभी अनुयायी संकल्प बद्ध होकर निश्चय करें कि—**हम वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक, सिद्ध करेंगे।**

"वेद' में क्या है? वेद का संदेश क्या है? वैदिक अध्यात्म क्या है? उसका दर्शन क्या है, यह सब आज हमें सिद्ध करना है। हमें सभी विद्याओं का मूल, ज्ञान-विज्ञान का स्रोत 'वेद' से सिद्ध करना है।

वेद और वैदिक साहित्य का भंडार आज उपेक्षित है। संसार के इस आदि ग्रन्थ के लिए किसी के भी पास न समय है न धन···कार्य हिमालय को लाँघने जैसा दुर्गम है। किन्तु समस्या समाधान चाहती है और गुरुदेव दयानन्द का जीवन स्वप्न कार्य सिद्धि हेतु, आवाहन कर रहा है।

हम एक साधनहीन ब्राह्मण की भाँति एकाकी··· भिक्षा के बल पर 'वेद' को विश्व धर्म बनाने का व्रत ले चुके हैं। हमारे पास अपनी देह और बुद्धि के अतिरिक्त अपना कहने के लिए कुछ नहीं है। फिर भी प्रभु विश्वास पर हम संकल्प जगा रहे हैं।

जिन पर दायित्व था 'वेद' के प्रचार का, वे आज इसे व्यर्थ की बात मानते हैं। ऋषि दयानन्द के लाखों अनुयायी श्रद्धा विहीन होकर केवल लकीर पीटने में लगे हैं या पदों के लिये लड़ने में।

क्या होगा? क्या इस चुनौती को स्वीकार करने का साहस नहीं किया जाएगा? क्या घर-घर में वेद की प्रतिष्ठा नहीं होगी? प्रभु की अमर वाणी क्या समय के प्रभाव से विस्तारित न की जा सकेगी?

यह प्रश्न है जो आज नए वर्ष के प्रथम दिन, इन पंक्तियों को लिखते हुए मन में उभर रहे हैं। रात हो या दिन, सफर हो या ठहराव मस्तिष्क केवल इस निमन्त्रण का उत्तर खोजता है!

साधन न होने पर लड़ना कोई मूर्खता कहे, पर यह हमारा स्वभाव है। कार्यसिद्धि के लिए 'वेद' को सब सत्य विद्याओं का ग्रन्थ सिद्ध करने के लिए "हम जीवन की अन्तिम सांस तक संघर्ष करेंगे।

बड़े से बड़ा पद, भी हमारे लिए तुच्छ है। सारी इच्छाएं केवल एक इच्छा में समा गयी हैं—

गूंज उठे धरती पर वेदों की वाणी।
दुनियां कह दे इसको माता कल्याणी।

विद्वानों को जुटाना है। साहित्य तैयार कराना है। विभिन्न भाषाओं में 'वेद' अनुवाद छपाने हैं। वेद पर खोज के लिए विशाल आयोजन यज्ञ आरम्भ करना है।

प्रभु ही सब कुछ करेंगे, वही बुद्धि, शक्ति और प्रेरणा देंगे। आप से तो यही कहना है कि क्या आप भी इस संकल्प में हमारे साथी नहीं हो सकते। क्या पिछले तीन-चार वर्षों का हमारा कार्य भी आप को प्रेरणा नहीं दे सकता।

वेद भाष्य पूर्ण हुआ। पर यह तो प्रथम कक्षा में प्रवेश है। लक्ष्य बहुत बड़ा है बहुत बड़ा! आप सोच भी नहीं सकते इतना बड़ा!

अन्तर को ज्योतिर्मय करो। प्रभु के चरणों में बैठो। प्रकाश मिलेगा। वेद-प्रकाश से अज्ञान नष्ट होगा, और होगा मानवता का भाग्योदय।

हम सपना नहीं देखते, सपना साकार करते हैं। १० वर्ष और देह चल सकी तो १९८५ में आप देखेंगे वेद की वीणा के स्वर सुनकर धरती ने क्या पाया है?

हमें सम्मान की भूख नहीं, मिलनी तो गालियां ही हैं अपनों से। गुरुदेव दयानन्द को भी जीवन में विष प्याले ही तो मिले थे, इच्छा केवल यह है कि हमारे प्राणों की आहुति से वह प्रकाश स्तम्भ बन जाए—जो वेद का प्रकाश भूमण्डल में फैला सके?

सत्यार्थ-प्रकाश शताब्दी मनाओ!

आर्यसमाजों से, आर्यों से, हमारा निवेदन है कि वे अप्रैल १९७६—मार्च १९७७ तक निरन्तर सत्यार्थ-प्रकाश शताब्दी मनाएं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आगामी आर्यसमाज स्थापना दिवस पर राजधानी में एक विशाल समारोह सत्यार्थ-प्रकाश शताब्दी का मनाया जाए।

सत्यार्थ-प्रकाश वह अमर क्रांतिकारी ग्रन्थ है जिसने संसार के भाग्य को नयी दिशा दी है। इसलिए इस महान् ग्रन्थ की शताब्दी पूरे बल से मनाने के लिए अभी से तैयारियां आरम्भ कर दी जाएं।

आप स्वयं अपना कर्त्तव्य सोचिए और पूरे एक वर्ष में सत्यार्थ प्रकाश फैलाने का व्रत लीजिये।

१००० ईंटें दीजिए

राजधानी में वेद मन्दिर के निर्माण का कार्य तेजी से आरम्भ हो गया है। ६००० वर्ग गज में इस विशाल आयोजन को आरम्भ करा दिया गया है।

२ कमरे बन चुके हैं। चार दीवारी बन रही है। सम्पूर्ण कार्य के लिये दस लाख ईंटों का प्रबन्ध करना है।

१००० ईंटों का मूल्य और उनके निर्माण पर २००) के लगभग व्यय पड़ता है। आप को यदि प्रभु ने दिया है तो राजधानी में बन रहे इस महान् पवित्र कार्य के लिये शीघ्र से शीघ्र कम से कम १००० ईंटों का पुण्य प्राप्त कीजिये।

५ खंडों में बनने वाले इस विशाल वेद मन्दिर को केवल शोभा के लिए नहीं अपितु वेद के प्रकाशस्तम्भ के रूप में बनाया जा रहा है। संस्थान द्वारा चलाया जा रहा सारा वेद प्रचार का कार्य यहीं से संचालित होगा।

१. इसमें विशाल पुस्तकालय होगा।
२. विद्वानों के निवास का प्रबन्ध होगा।
३. प्रत्येक खण्ड में एक-एक वेद का अनुसंधान-कक्ष होगा।
४. सभी कार्यकर्त्ताओं का निवास होगा।
५. उच्चतम शिक्षा-हेतु एक विद्यालय होगा। जिसमें अत्युत्तम कोटि के विद्वान् शिक्षा प्राप्त करेंगे।
६. दर्शनीय यज्ञशाला होगी। और वह सभी कुछ होगा, जो 'वेद' के प्रचार के लिए आवश्यक है।

धन जैसे-जैसे जितना आता जाएगा काम उतना ही बढ़ता जाएगा। भविष्य आप के हाथ में है। श्रद्धा हो, विश्वास हो, प्रेम हो तो उदारतापूर्वक सहयोग दीजिए और अभी ईंटों का प्रबन्ध तो तुरन्त कर ही दीजिए, ताकि कार्य न रुकने पाये।

दयानन्द संस्थान का प्रबन्ध-कार्यालय

३३७-A, सूर्यनगर, निकट विवेक विहार, शाहदरा बार्डर में स्थित है। वहां का फोन नं० २०१५८४ है। सभी शिकायतें व आवश्यक पत्र वहीं भेजें।

स्वयं जाने के लिए ३४०—२१६—२२६—२२५—३१२ आदि बसें जाती हैं। कार्यालय का समय १० से ५ तक है। गाजियाबाद वाली सभी बसें चुंगी बार्डर पर रुकती हैं।

भारतेन्द्र नाथ

(पृष्ठ २ का शेष)

अकेले व्यक्ति के लिये सत्य-असत्य की समस्या नहीं रह जाती। इसलिये कहा, जब हम दूसरों के साथ सम्पर्क में आयें तो हमें 'सत्यमन्त्र' सच्ची सलाह देकर सत्पथ पर ले जाने वाला बनना चाहिये। हम दूसरों को सब अवस्थाओं में सत्य सलाह ही देंगे। यह तब सम्भव है जबकि हमारे अन्दर उनके लिये हित हो। जब विरोध पड़ता है तब हम जिससे विरोध रखते हैं उसका पक्ष ले लेते हैं और जिससे हित नहीं रखते उसके विपक्षी बन जाते हैं और इस प्रकार द्वेष में आकर हमारे सत्य मार्ग से विचलित हो जाने का भय उत्पन्न हो जाता है। यदि हम द्वेष को जीतकर सब से प्रेम करने लगें तो हमारा सभी से हित होगा और तब हम द्वेषवश किसी के साथ असत्य व्यवहार नहीं करेंगे। तब हम जो कुछ करेंगे सबके भले और कल्याण के लिये सत्य ही करेंगे। इसलिये कहा कि हमें 'पितरः' बनना चाहिये। पिता जैसे अपने बच्चों से प्रेम रखता है और निष्पक्ष होकर उनमें से प्रत्येक के हित और कल्याण की भावना से जो ठीक समझता करता है, वैसे ही हमें प्राणि-मात्र के प्रति प्रेम रखते हुए उनके भले के लिये जो ठीक और सत्य समझें वही करना चाहिये। जब हम अपने आप को साधना की इस अवस्था में ले आते हैं तब हमें, हमारे हृदय पवित्र होने के कारण छिपी हुई ज्योति भगवान् के दर्शन होते हैं और उनके दर्शन से हमारे आत्मज्ञान में आध्यात्मिक उषा छा जाती है।

संसार में फंसे हुए मनुष्य! अपने को साधना में से गुजार, अपने आपको भगवान् के दर्शनों का अधिकारी बना! फिर देखना तेरे आत्मा में भगवान् की कैसी सुन-हली ज्योति खिल उठेगी!

क्या आप ३०१) भेजकर आजीवन सदस्य नहीं बन सकते?

क्या आप के मन में कभी यह इच्छा नहीं जागती कि आपका अपना भी कोई अच्छा पत्र हो?

भूलिए नहीं—शताब्दी वर्ष का उपहार जन-ज्ञान साप्ताहिक—आपके सहयोग की राह देख रहा है—कैसे भी करें पर ३०१) भेजकर हमें आगे बढ़ने में सहयोग दें।

—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पं० वेदभूषण

संध्या : पद्य में

गायत्री मन्त्र—

ओ३म् । भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । यजु० ३६।३

प्राणदाता वही प्रभु है । दुःख जो सबका हरे ।
सुख प्रदाता, वह विधाता । सृष्टि की रचना करे ।
विज्ञ जन हैं गान करते । श्रेष्ठ शुद्ध स्वरूप जो ।
दिव्य गुण होकर प्रकाशित । कर रहा सबको अहो !
ध्यान उसका गान उसका । जन सदा करता रहे ।
वह हमारी बुद्धि में । शुभ प्रेरणा भरता रहे ।

आचमन मन्त्र—

ओ३म् । शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः । यजु० ३६।१२

दिव्य गुण से युक्त है जो । व्यापता भगवान है ।
इष्ट फल की प्राप्ति का । जिससे मिला वरदान है ।
शांति का दाता वही जो । शम् सदा करता रहे ।
सुखद वर्षा हो चतुर्दिक् । शम् सदा झरता रहे ।

इन्द्रिय स्पर्श मन्त्र—

ओ३म् वाक् वाक् । ओ३म् प्राणः प्राणः । ओ३म् चक्षुश्चक्षुः । ओ३म् श्रोत्रं श्रोत्रम् । ओ३म् नाभिः । ओ३म् हृदयम् । ओ३म् कण्ठः । ओ३म् शिरः । ओ३म् बाहुभ्यां यशोबलम् । ओ३म् करतल करपृष्ठे ।

माधुर्य से भरी हो । यश युक्त कीर्ति वाणी ।
बलवान प्राण मेरे । होवें शतायु प्राणी ।
आँखें हों सूक्ष्मदर्शी । सुखदा पुनीत दृष्टि ।
कानों से सुश्रुति हो । गुञ्जित सुशब्द सृष्टि ।
जनिता सुशक्तिशाली । नाभि सदा हमारी ।
पावन हृदय हमारा । बलवान् और उदारी ।
नीरोग कण्ठ सबका । कोमल मधुर सुभाषी ।
मेधावी स्वस्थ शिर हो । केशों की हो सुराशि ।
बलवान और यशस्वी । दोनों भुजाएँ भारी ।
हाथों के दो तले भी । दानी सुयश भण्डारी ।

मार्जन मन्त्र—

ओ३म् भूः पुनातु शिरसि । ओ३म् भुवः पुनातु नेत्रयोः । ओ३म् स्वः पुनातु कण्ठे । ओ३म् महः पुनातु हृदये । ओ३म् जनः पुनातु नाभ्याम् । ओ३म् तपः पुनातु पादयोः । ओ३म् सत्यं पुनातु पुनश्शिरसि । ओ३म् खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र । तैत्ति० १०।१७

प्राणों को देने वाले । शिर को पवित्र कर दो ।
दुःखों को हरने वाले । आँखों में ज्योति भर दो ।
पावन हो कण्ठ मेरा । सुख के सुकाम—भावना ।
होवें महान् स्वामिन् । सबके हृदय सुपावन !
प्यारे जनक प्रभो हो । नाभि पुनीत जननी ।
पैरों में हों सबलता । सुफलता सुनीति सरणी ।
हे सत्यरूप भगवन् । पावन ये सबके शिर हों ।
हे ब्रह्मरूप स्वामिन् । पावन ये अंग फिर हों ।

प्राणायाम मन्त्र—

ओ३म् भूः । ओ३म् भुवः । ओ३म् स्वः । ओ३म् महः । ओ३म् जनः । ओ३म् तपः । ओ३म् सत्यम् । तैत्ति० १०।२७

प्राणेश प्राणदाता । दश प्राण पुष्ट कर दो ।
दुःख दूर हों सभी के । ऐसा वरिष्ठ वर दो ।
सुख के अथाह सागर । सुख से सभी को भर दो ।
महिमा स्वरूप भगवान् । सब विधि महान् कर दो ।
तुम हो जनक सभी के । हम हों जनक दुलारे ।
होवें महा—तपस्वी । कष्टों के सहने हारे ।
हे सत्यरूप स्वामिन् ! प्राणों में शक्ति भर दो ।
हों सत्य के प्रकाशक । भावों में भक्ति भर दो ।

अघमर्षण मन्त्र—

ओ३म् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥ ऋक्० १०।१९०।१

हे सृष्टि कर्त्ता भगवान् ! रचना महान् तेरी ।
वेदों के ज्ञान दाता । गुंजित हो सत्य भेरी ।
सामर्थ्य से ही निज के । रचता विशाल सृष्टि ।
फिर रात भी बनाई । सागर—विशाल वृष्टि ।

ओ३म् समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो । अजायत । अहोरात्राणि विदध द्विश्वस्य मिषतो वशी ॥ ऋक्० १०।१९०।२

रचकर समुद्र पहले । दिन-रात फिर बनाये ।
वश में सभी को रखकर । संवत् यहाँ सजाये ।
तुम ही प्रभो नियामक । शक्ति अपार तेरी ।
पापों से बच सकें हम । पाकर के गोद तेरी ।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चाऽन्तरिक्षमथो स्वतः । ऋक्० १०।१९०।३

पूर्व कल्प में यथा रची थी । तुमने प्रभु सृष्टि सारी ।
द्यौ भू अंतरिक्ष के स्वामी । हो तुम सूर्य-चन्द्र धारी ।
स्वर्ग बनाकर भू को तुमने । सूरज चांद रचाएँ ।
सदा एक सी रचना करते । अद्भुत साज सजाए ।
अनायास ही तव चरणों में । यह मस्तक है झुक जाता
सुख स्वरूप ओ सुख के दाता । हो तुम जग भर के त्राता

आचमन मन्त्र—

ओ३म् शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभि स्रवन्तु नः । यजु० ३६।१२

हे दिव्य रूप देवी । आनन्द इष्ट हेतु ।
अमृत समान जल हो । कल्याण शान्ति सेतु ।
चारों तरफ से वृष्टि । कल्याण युक्त होवे ।
शान्ति की कामना से । सन्ताप आप धोवें ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मनसा परिक्रमा मन्त्र—

ओ३म् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । अथर्व० ३।२७।१

प्राची पति है अग्नि । किरणें प्रतीक जिसकी ।
आदित्य बाण जिसके । मारक अनीक जिसकी ।
उनको प्रणाम मेरा । पति रूप को नमस्ते ।
रक्षक को सिर नवाऊँ । शर को भी हो नमस्ते ।
श्रद्धा से नत है मस्तक । सब को पुनः नमस्ते ।
जो द्वेष हों परस्पर । तेरे समक्ष धरते ।

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । अथर्व ३।२७।२

दक्षिण का इन्द्र स्वामी । शर हैं पितर सुज्ञानी ।
तिर्य्यक् व वृश्चिकों से । रक्षा करे सुमानी ।
उनको प्रणाम मेरा । पति रूप को नमस्ते ।
रक्षक को सिर नवाऊँ । शर को भी हो नमस्ते ।
श्रद्धा से नत है मस्तक । सबको पुनः नमस्ते ।
जो द्वेष हों परस्पर । तेरे समक्ष धरते ।

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्न मिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । अथर्व० ३।२७।३

वरुण बने पश्चिम के स्वामी । भुजगादि से करते त्राण
अन्न बाण हैं जिनके वे । भरते हैं सबमें नूतन प्राण ।
उनको प्रणाम मेरा । पति रूप को नमस्ते ।
रक्षक को सिर नवाऊँ । शर को भी हो नमस्ते ।
श्रद्धा से नत है मस्तक: सबको पुनः नमस्ते ।
जो द्वेष हों परस्पर । तेरे समक्ष धरते ।

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । अथर्व० ३। ७।४

सोम सदा स्वामी उत्तर के । शान्ति सुधा बरसाते हैं ।
विद्युत् शर को कर धारण वे । सोम सुधा सरसाते हैं
उनको प्रणाम मेरा । पति रूप को नमस्ते ।
रक्षक को सिर नवाऊँ । शर को भी हो नमस्ते ।
श्रद्धा से नत है मस्तक । सबको पुनः नमस्ते ।
जो द्वेष हों परस्पर । तेरे समक्ष धरते ।

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । अथर्व० ३।२७।५

विष्णु स्वामी नीचे के हैं । वे वृक्ष लता पनपाते ।
वृक्ष बाण हैं जिनके सुन्दर । पत्र पुष्प बरसाते ।
उनको प्रणाम मेरा । पति रूप को नमस्ते ।
रक्षक को सिर नवाऊँ । शर को भी हो नमस्ते ।
श्रद्धा से नत है मस्तक । सबको पुनः नमस्ते ।
जो द्वेष हों परस्पर । तेरे समक्ष धरते ।

ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । अथर्व० ३।२७।६

बृहस्पति ऊपर के स्वामी । परम ज्ञान के दाता हैं ।
वृष्टि बिन्दु ही जिनके शर हैं । श्रुति वाणी के गाता है
उनको प्रणाम मेरा । पति रूप को नमस्ते ।
रक्षक को सिर नवाऊँ । शर को भी हो नमस्ते ।
श्रद्धा से नत है मस्तक । सबको पुनः नमस्ते ।
जो द्वेष हों परस्पर । तेरे समक्ष धरते ।

उपस्थान मन्त्र—

ओ३म् उद्वयं तमसस्परिः स्वः पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यं मगन्म ज्योतिरुत्तमम् । यजु० ३५।१४

प्रलय रात्रि से पहले भी जो । उत्तम ज्योतिष्मान् रहे
देवों का भी देव जिसे । श्रुति सुख स्वरूप भगवान् कहे
तेजपुंज हे स्वयं प्रकाशक । तेरा ही गुणगान करें ।
तुम हो रक्षक प्रभु हमारे । तेरा ही हम ध्यान धरें ।

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् । यजु० ३३।३१

वेद ज्ञान के दाता प्रभु ही । ज्ञान रश्मि छिटकाते हैं ।
वेद श्रुति के द्वारा उसके । ऋषि मुनि भी गुण गाते हैं
विश्व-ज्ञान के हेतु महा प्रभु । हम तुमको अपनाते हैं ।
सूर्य रूप तुम आत्म-प्रकाशक । इसीलिए हम ध्याते हैं ।

चित्रं देवानामुदगादनीकं । चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः । आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा । यजु० ७।४२

द्यौ पृथिवी और अन्तरिक्ष का,
चर का और अचर का स्वामी ।
प्राण चक्षु औ आत्मदेवता,
धर्ता सूर्य अनल जल नामी ।
आत्मा ज्ञान के दाता तुम हो,
करो प्रकाशित मेरे मन को ।
मनुज हृदय के स्वामी हो तुम,
करो विमल सुन्दर तन को ।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतः आदीराः स्याम शरदः शत भूयश्च शरदः शतात् । यजु० ३६।२४

है जो देवों का हितकर्ता । और जगत् का द्रष्टा है ।
तीनों कालों का जो धर्ता । और जगत् का स्रष्टा है
शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव ! हम तेरा ही गुण-गान करें
देखें शत वर्षों आँखें बस । तेरा ही हम ध्यान धरें ।
दो प्राणदीप प्रभो तुम मुझ को । शत वर्षों का जीवन पाऊं
शत-शत वर्ष प्रभो कानों से । सुश्रुति मैं सुनता जाऊँ ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शत-शत वर्ष प्रभो मैं सुख से। जग को वैदिक गान सुनाऊँ
शतवर्षों तक रहूँ निरोगी। सत्य-प्रिय, नहिं दीन कहाऊँ
दो वरदान प्रभो तुम मुझ को। शत वर्षों में पा न सकूं।
तो मैं अपने इस आयुष् को। और अधिक भी बढ़ा सकूं।

गायत्री मन्त्र—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्। यजु० ३६।३

'भूः' जो है प्राणों का दाता। 'भुवः' दुखों का हर्ता है। जो है 'स्वः' सुखों का दाता। 'सवितः' सकल सृष्टि कर्ता है 'वरेण्यं' जो श्रेष्ठ देवता। 'भर्गः' शुद्ध स्वरूप रहे। 'देवस्य' जो स्वयं प्रकाशक। 'धीमहि' गुण ध्यानस्थ कहे। 'यः' जो पिता 'नः' हम सबों की। 'धियः' बुद्धि, सुकर्म को अपनी कृपा से प्रचोदयात्' प्रेरित करे, शुभ धर्म को।

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

धर्म के हों हम धनी। हम अर्थ के दानी बनें।
कामनाएँ पूर्ण हों। हम मोक्ष के ज्ञानी बनें।
हे दया-सागर प्रभो! समृद्ध हमको कीजिये।
जप उपासन कर्म से प्रभु। सिद्धि सत्वर दीजिये।

समर्पण मन्त्र—

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च। यजु० ११।४१

सर्व सुखकारी प्रभो! मैं कर रहा तुमको प्रणाम।
सुख स्वरूप महा विभो! मैं कर रहा तुमको प्रणाम।
शान्ति कर्ता हे प्रभो! मैं कर रहा तुमको प्रणाम।
सर्व मंगल हे विभो! मैं कर रहा तुमको प्रणाम
सकल मंगलकर प्रभो! मैं कर रहा तुमको प्रणाम।
नित्य कल्याणी विभो! मैं कर रहा तुमको प्रणाम।

किसकी उपासना करें?

स्तुति, प्रार्थना, उपासना श्रेष्ठ की ही की जाती है। श्रेष्ठ उसको कहते हैं। जो गुण, कर्म, स्वभाव और सत्य-सत्य व्यवहारों में सबसे अधिक हो। सब श्रेष्ठों में भी जो अत्यन्त श्रेष्ठ है उसको परमेश्वर कहते हैं। जिसके तुल्य कोई न हुआ, न है और न होगा। जब तुल्य नहीं तो उससे अधिक क्योंकर हो सकता है। जैसे परमेश्वर के सत्य, न्याय, दया, सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञत्वादि अनन्त गुण हैं। वैसे अन्य किसी जड़ पदार्थ व जीव के नहीं हैं। जो पदार्थ सत्य हो उसके गुण, कर्म, स्वभाव भी सत्य होते हैं। इसलिए मनुष्यों को योग्य है कि परमेश्वर ही की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करें। उससे भिन्न की कभी न करें।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

अधिक से अधिक व्यक्तियों
तक वेद का सन्देश पहुंचाएं

संस्थान के नए प्रकाशन

१ आर्याभिविनय

काव्यमय व्याख्या सजिल्द २.५०
अजिल्द १.५०।

◆

२ वैदिक गृहस्थाश्रम—सजिल्द

पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड
मूल्य ६ रु०

◆

३ वैदिक गीता (पद्यानुवाद)

मूल्य १ रु०

◆

४ दयानन्द चित्र दर्शन

मूल्य २० रु०

किन्तु प्रचार के लिए
अभी मूल्य १५ रु०

◆

५ संस्कार विधि

राज संस्करण बड़ा साइज, कपड़े की जिल्द
मूल्य ६ रु०
सादी जिल्द मूल्य ५ रु०

◆

शीघ्र मंगाइए

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-११०००५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द संस्थान

—रामकृष्ण भारती एम० ए० शास्त्री

दयानन्द-संस्थान एक पंजीकृत न्यास है। इसे पंजीकृत हुए कुछ ही वर्ष हुए हैं पर इन वर्षों में इस न्यास के तत्वावधान में जो भी कार्य सम्पन्न हुआ है, उस पर संस्थान के कार्यकर्ताओं तथा अधिकारियों को पूर्ण श्रेय मिलना ही चाहिए। वेदभाष्य को प्रकाशित करके आर्य परिवारों तक समुचित मूल्य में पहुँचना अपने आप में एक बड़ी साधना है। इसके प्रकाशमार्ग में कई कठिनाइयां आई पर यह कार्य सकुशल सम्पन्न हुआ। महर्षि के वेद भाष्य के अतिरिक्त संस्थान के तत्वावधान में जनज्ञान प्रकाशन ने १०० से भी अधिक पुस्तकें थोड़े ही वर्षों में प्रकाशित करके वैदिक साहित्य के प्रकाशन-क्षेत्र में एक चमत्कारसा कर दिखलाया है। मासिक जन-ज्ञान हिन्दी, मासिक जनज्ञान अंग्रेजी के अतिरिक्त साप्ताहिक जन-ज्ञान का प्रकाशन अपने आप में एक साहसपूर्ण कार्य ही है। वेद भाष्य के अतिरिक्त वैदिक साहित्य का भी संस्थान की ओर से प्रकाशन हुआ है। वैदिक सत्संग पद्धति हजारों की संख्या में प्रकाशित हुई है। महर्षि का जीवन चरित्र के ग्यारह संस्करण हाथों हाथ बिक गए। महर्षि दयानन्द के अमर ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश कई संस्करणों में संस्थान के द्वारा प्रकाशित होकर जनता के हाथों में घर घर पहुँचा है और अब भी उसकी मांग निरन्तर बनी हुई है।' 'वेदामृत' का प्रकाशन भी अपने आपमें महत्वपूर्ण है। इसका संपादन स्वामी दयानन्द तीर्थ तथा श्रीपाद दामोदर जी सातवलेकर ने किया है। स्वामी समर्पणानंद जी का शतपथ ब्राह्मण प्रथम कांड भी इस प्रकार का एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसके प्रकाशन का श्रेय संस्थान की ओर से जनज्ञान प्रकाशन को है। वेदों का यथार्थ स्वरूप भी इसी प्रकार एक महत्वपूर्ण प्रकाशन है, जिसके लेखक श्री पं० धर्मदेव विद्या मार्तण्ड हैं।

आध्यात्मिक साहित्य में स्वामी सर्वदानन्द जी सरस्वती की 'ईश्वर भक्ति' रचना महत्वपूर्ण है। महात्मा नारायण स्वामी जी की 'नारायण अध्यात्म-सुधा' भी इसी प्रकार की महत्वपूर्ण पुस्तक है। महात्मा नारायण स्वामी जी के द्वारा लिखित उपनिषद कथा माला भी अध्यात्म विषय की महत्वपूर्ण पुस्तक है। सत्यार्थ प्रकाश के अतिरित महर्षि के अन्य ग्रन्थों का प्रकाशन भी संस्थान के तत्वावधान में जनज्ञान प्रकाशन के द्वारा हुआ है। संस्कार विधि ऐसे ग्रन्थों में उल्लेखनीय है महात्मा आनंद स्वामी जी का 'यज्ञ प्रसाद तो गागर में सागर ही है। स्वामी अच्युतानन्द जी के वेदशतक अपने समय में आर्य-समाज में काफी प्रसिद्ध रहे। उनका पुनः प्रकाशन वेद ज्योति के नाम से संस्थान की ओर से हुआ है। आर्य-समाज के नियमों पर पं० मोहनलाल विष्णुलाल पड्या की महत्वपूर्ण पुस्तक को जनज्ञान प्रकाशन ने पुनः प्रकाशित करके आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं तथा हितैषियों के लिए चिन्तन की मौलिक सामग्री प्रस्तुत की है। संस्थान के प्रकाशन विभाग की ओर से कुछ प्रचार पुस्तिकायें भी प्रकाशित हुई हैं। कभी स्वामी दयानन्द जी के ट्रैक्टों की आर्य जगत में धूम थी। आर्यसमाज के प्रचार में ऐसे साहित्य का योगदान अलग अलग महत्व रखता है। जनज्ञान प्रकाशन की ओर से कुछ महत्वपूर्ण अंग्रेजी पुस्तकों का भी प्रकाशन हुआ है।

महर्षि के सत्यार्थप्रकाश का अंग्रेजी अनुवाद Light of Truth के नाम से प्रकाशित करके जनज्ञान प्रकाशन ने अंग्रेजी भाषा भाषी जनता तक महर्षि के विचार पहुँचाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसी प्रकार ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका का अंग्रेजी रूपांतर 'An introduction to the Commentary in the Vedas के नाम से प्रकाशित करके जनज्ञान प्रकाशन ने लेखनी के कार्य को आगे बढ़ाया है। इसी प्रकार का एक महत्वपूर्ण प्रकाशन है डा० सत्य-प्रकाश जी की अंग्रेजी पुस्तक Man and his Religion ईसाई धर्म के सम्बन्ध में भी कुछ महत्वपूर्ण अंग्रेजी पुस्ति-काएँ प्रकाशित हुई हैं। ऐसी पुस्तकों में महात्मा आनन्द स्वामीजी की पुस्तक Whose wealth अत्यन्त महत्व पूर्ण है। इसी प्रकार की एक और पुस्तक स्वामी सत्य प्रकाश जी का अंग्रेजी ग्रंथ Dayananda outline of Veda Philosophy है। डा० सत्यप्रकाश की अन्य महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं Agnihotra तथा the Nectareal songs of the Vedas.

ऊपर संक्षेप में हमने संस्थान के जनज्ञान प्रकाशन की कुछ पुस्तकों का उल्लेख किया है। आर्यसमाज की शिरोमणि संस्थाओं की ओर से गत एक सौ वर्षों में जितने साहित्य का प्रकाशन तथा प्रचार और प्रसार हुआ है, उस दृष्टि से संस्थान के कुछ वर्षों का यह लेखा-जोखा अपने आप में एक साहस का कार्य ही कहा जाएगा। इस सबका श्रेय हमें संस्थान के अध्यक्ष श्री भारतेन्द्रनाथ तथा संस्थान की मंत्री उनकी धर्मपत्नी श्रीमती राकेशरानी को देना होगा। यह सारा परिवार गत पाँच दस वर्षों से जिस साधना में लगा हुआ है, इसके लिए उन्हें हार्दिक बधाई तथा साधुवाद देना प्रत्येक आर्य का कर्त्तव्य हो जाता है। ईसाई धर्म के प्रचार में उनके साहित्य का महत्वपूर्ण भाग है। इसी प्रकार यदि हम आर्यसमाज को एक जीती जागती संस्था अथवा आन्दोलन बनाना चाहते हैं तो हमें अमर शहीद लेखराम जी के अमर वाक्य को सदैव स्मरण रखना होगा-लेखनी का कार्य बन्द न हो।

भगवान करे आर्यसमाज में ऐसे दो चार दीवाने प्रकाशक और आगे आएँ जिससे हमारा प्रकाशन-कार्य और प्रचारकार्य निरन्तर प्रगति करे। आवश्यकता इस बात की है कि हम मुफ्त में ऐसा साहित्य लेने की प्रवृत्ति का त्याग करें और ऐसे साहित्य के लिए भी कुछ न कुछ अपना पारिवारिक बजट बनाएँ। शारीरिक मांग के साथ साथ मानसिक तथा आध्यात्मिक मांग का भी अपना महत्व है। इस ओर भी हमें समुचित ध्यान देना होगा। संस्थान अभी एक शिशु है। पर इस शिशु की प्रगति को देखकर किसे हर्ष और गर्वन होगा ? संस्थान के अधिकारियों तथा कार्यकर्त्ताओं को हमारी हार्दिक बधाई।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

मेरी विदेश यात्रा-२

सूरिनाम में वेद प्रचार का प्रेरक वर्णन

* * *

क्रान्ति के अग्रदूत, अखण्ड ब्रह्मचारी, परम वेदज्ञ, योगिराज महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सन् १८७५ में भारत की बम्बई नगरी में आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज रूपी अग्नि की चिनगारियां यहां से देश-देशान्तरों और द्वीप-द्वीपान्तरों में व्याप्त हो गईं। अमेरिका, इंगलैण्ड, ट्रीनीडाड, गयाना, सूरिनाम, फिजी, थाईलैण्ड, बैंकाक, मारिशस, दारेसलाम, डरबन आदि में आर्यसमाज वैदिकधर्म का शंखनाद फूंक रहा है।

१९७५ में संसार में जहां-जहां भी आर्यसमाज हैं सर्वत्र आर्यसमाज की शताब्दी धूमधाम से मनाई गई। शताब्दी सम्मेलन को प्रभावशाली रूप में मनाने के लिए सर्वत्र कार्यक्रम बनाये गये।

सूरिनाम में तीन संस्थाएं हैं—१. आर्यदिवाकर महासभा—यह सर्वप्रथम और सबसे अधिक शक्तिशाली संस्था है। इस संस्था द्वारा यहां अनेक स्कूल चलाये जाते हैं। अनेक समाजें इसी संस्था से सम्बद्ध हैं। एक आर्य अनाथालय भी सफलतापूर्वक चल रहा है जिसका बहुत शानदार निजी भवन है। सभी अधिकारी और पण्डितवर्ग बहुत ही लगन और निष्ठापूर्वक आर्यसमाज की उन्नति में संलग्न हैं। २. आर्य प्रतिनिधि सभा—इस समय इस सभा में कुछ शिथिलता है। इसके अन्तर्गत भी एक अनाथालय चल रहा है। ३. आर्य प्रान्तिक सभा—यह सभा भी बहुत तीव्रगति से कार्य कर रही है।

शताब्दी के उपलक्ष्य में तीनों सभाओं ने मिल-जुलकर ग्राम-ग्राम में आर्यसमाज शताब्दी का आयोजन किया। यह आयोजन शताब्दी से लगभग ६-७ मास पूर्व आरम्भ हो गया था। अप्रैल में शताब्दी के अवसर पर पं० आर० शिवरत्न जी की प्रेरणा पर मुझे भारत से सूरिनाम बुलाया गया। इस कार्य के लिए धन की आवश्यकता थी। इस धनराशि का लगभग आधा भाग श्री शाऊजी द्वारा प्रदान किया गया। इसी शताब्दी सम्मेलन के उपलक्ष्य में मैं ७ अप्रैल १९७५ को सूरिनाम पहुंचा।

१० अप्रैल से १२ अप्रैल तक दिवाकर महासभा में शताब्दी सम्बन्धी विशेष आयोजन रखा गया। उपस्थिति बहुत अच्छी रही। दूसरे दिन का सारा कार्यक्रम राधिका रेडियो द्वारा प्रसारित किया गया, जिसे अपने घर बैठे हुए सहस्रों लोगों ने सुना।

१३ अप्रैल को आर्य प्रतिनिधि सभा में भी शताब्दी के ही उपलक्ष्य में एक व्याख्यान दिया।

फिर क्रम से भिन्न-भिन्न समाजों में कहीं एक दिन, कहीं दो दिन और कहीं तीन दिन मेरे प्रवचन होते रहे। यह क्रम लगभग २ मास तक चला। इसमें दो-तीन स्थानों का वर्णन उल्लेखनीय है।

२० अप्रैल को सरमक्का में एक आर्यसमाज मन्दिर का उद्घाटन था। इस अवसर पर मुझे भी वहां बुलाया गया था। इस मन्दिर को देखकर हृदय गद्गद हो गया। मन्दिर बहुत ही कलापूर्ण रूप में बनाया गया था। श्रद्धा का पुट यत्र-तत्र सर्वत्र दिखाई देता था और उस समय तो मुझे महान् आश्चर्य हुआ जिस समय मुझे यह बताया गया कि यह मन्दिर एक ही व्यक्ति ने, जिनका नाम गणेशजी और दूसरा नाम मदनलाल जी है, लगभग एक लाख गिलन=सूरिनाम का सिक्का [एक गिलन भारतीय चार रुपये के बराबर है] की लगात से बनाकर आर्यसमाज को प्रदान किया है। कैसी अपूर्व श्रद्धा है! आर्यसमाज के प्रति कितनी निष्ठा है! यहां प्रातः-सायं दो व्याख्यान हुए। उपस्थिति अच्छी थी। दोनों समय सभी आगन्तुकों के भोजन का प्रबन्ध किया गया था।

आर्यसमाज क्वाटा में शताब्दी के उपलक्ष्य में तीन व्याख्यान रखे गये। यहां मैंने तीन दिन में गायत्री मन्त्र की व्याख्या की। पहले दिन के प्रवचन में मैंने "स्त्रियों को भी गायत्री मन्त्र के जाप का अधिकार है" इस सम्बन्ध में कुछ चर्चा करते हुए यह कह दिया था कि पुराणों में स्त्री-जाति के सम्बन्ध में बहुत-सा अनर्गल प्रलाप किया हुआ है, जैसे—

न राज्ञा सह मित्रत्वं न सर्पो निर्विषः क्वचित्।
न कूलं निर्मलं तत्र स्त्रीजनो यत्र जायते॥

गरुड़ पुराण पू० ११०।९

राजाओं के साथ मित्रता स्थायी नहीं होती, सर्प विषहीन नहीं होता और जिस कुल में स्त्री होती है, वह कुल पवित्र नहीं होता।

आर्यसमाज इस प्रकार की अनर्गल बातों को नहीं मानता है। वैदिक धर्म में नारी हेय, अनादृत और तुच्छ नहीं है। वह सम्माननीया है, आदरणीया है।

व्याख्यान के मध्य में ही श्री योगिराज नामक एक व्यक्ति ने जो भारत सरकार की ओर से गयाना में सांस्कृतिक दूत हैं, एक चिट भेजी कि इस श्लोक पर कुछ कहें। मैंने उत्तर दिया मुझे तो जो कुछ कहना था कह दिया, व्याख्यान की समाप्ति पर आपको जो पूछना है आप पूछ लें मैं उत्तर दे दूंगा। व्याख्यान समाप्त हुआ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री योगिराज बोले कि शब्दों के अनेक अर्थ होते हैं। उदाहरण के रूप में यहां लिखा हुआ है—'कृण्वन्तो विश्व-मार्यम्' इस वाक्य का अर्थ यह भी हो सकता है कि वि=विशेष रूप से और श्वम्=अपने आपको आर्य बनाओ। इसी प्रकार से इस श्लोक में भी 'नकुलम्' को इकट्ठा मानकर 'नकुलम्' बन जाता है जिसका अर्थ न्योला होता है। मैंने उत्तर दिया कि श्वम् का अर्थ अपने आपको तीन काल में भी नहीं हो सकता। स्वयं का अर्थ आप होता है न कि श्वम् का। श्वम् शब्द तो शुनम्=कुत्ते के अधिक निकट है। यह आपका अर्थ न कोश से सम्भव है और न व्याकरण से।

गरुड़ पुराण के श्लोक में 'नकुलम्' एक शब्द नहीं है। यह शब्द न+कुलम् इसी रूप में है और पौराणिकों ने इसका यही अर्थ किया है जो मैंने बोला है। प्रकरण के अनुसार भी यही अर्थ सम्भव है।

यहां भी उपस्थिति खूब रही, दूसरे दिन मन्दिर खचाखच भर गया। मन्दिर के बाहर भी व्यवस्था की गई।

५ मई से ७ मई तक सान्ताबोमा में आर्य प्रान्तिक सभा के पण्डित पं० देवदत्त जी के गृह पर तीन दिन वेद यज्ञ और श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण कथा का आयोजन किया गया। तीन दिन में केवल बालकाण्ड तक की ही चर्चा हो पाई। इस चर्चा में रामायण सम्बन्धी अनेक भ्रान्तियों को दूर किया गया। सनातनियों ने विशेष रूप से इसे पसन्द किया। उपस्थिति यहां भी खूब रही।

यहां दूसरे दिन पं० देवदत्त जी ने मुझे बताया कि कुछ आर्यसमाजियों ने ही रामायण कथा के ऊपर आपत्ति की है। उस दिन मैंने महर्षि के निम्न शब्द वहाँ पढ़ कर सुनाए—

"तत्पश्चात् मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण और महाभारत के उद्योगपर्वान्तर्गत विदुरनीति आदि अच्छे-अच्छे प्रकरण जिनसे दुष्ट व्यसन दूर हों और उत्तमता सभ्यता प्राप्त हो वैसे को काव्य रीति से अर्थात् पदच्छेद, पदार्थोक्ति, अन्वय, विशेष्य, विशेषण और भावार्थ को अध्यापक लोग जनावें और विद्यार्थी लोग जानते जाएँ।"

—सत्यार्थप्रकाश, तृतीय समुल्लास

महर्षि दयानन्द ने रामचरित मानस को आल ग्रन्थों में रखा है परन्तु वाल्मीकि रामायण के पठन-पाठन का विधान किया है अतः आर्यसमाज की वेदी से रामायण और महाभारत की कथा में कोई दोष नहीं है।

एक बात और भी है। रामायण और महाभारत के सच्चे स्वरूप को आर्यसमाज ही लोगों के सामने रख सकता है। हर बात को 'ब्रह्मवाक्यं जनार्दनः' भगवान् का वाक्य मानने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम राम और योगेश्वर कृष्ण का सच्चा स्वरूप जनता के समक्ष प्रस्तुत नहीं कर सकते।

तीन दिन श्री पं० आर० शिवरत्न जी के गृह पर वेद यज्ञ और वेद प्रवचन हुए। पंडित जी के गृह पर भव्य सजावट मन मोहती थी। सारे ही परिवार में श्रद्धा का वातावरण ओत-प्रोत था। यहां भी तीनों दिन सभी श्रोताओं के भोजन का प्रबन्ध था।

आर्यसमाज कण्डाल, वैलगदास्त सेई, औत्क्वेक, ली फोर्नो आदि समाज मन्दिरों में भी एक-एक, दो-दो प्रवचन हुए।

भारतवर्ष में ७-७ दिन की कथाएं होती हैं। वार्षिकोत्सव होते हैं, श्रावणी उपाकर्म, ऋषिबोधोत्सव और आर्यसमाज स्थापना दिवस पर विशेष आयोजन किये जाते हैं, प्रायः सात-सात दिन की प्रवचन मालाएं चलती हैं। इसके विपरीत सूरिनाम में प्रायः तीन-तीन दिन की कथाएं या प्रवचन होते हैं। परन्तु इस परम्परा के विपरीत क्लीन हेनार्द पाल्दर, निकीरी में श्री भगाली जी ने अपने गृह पर सात दिवसीय वेद यज्ञ और वेद प्रवचनों का आयोजन किया।

भगाली जी एक सम्पन्न कृषक हैं। आपके पास अठारह हैक्टर भूमि है। इस भूमि में धान बोया जाता है। आपने सन् ७५ में अपने गृह पर यज्ञ कराने का संकल्प किया हुआ था। इस वर्ष में इनके यहाँ प्रति हैक्टर ८४ साका [प्रति साका ७० किलो] धान उत्पन्न हुआ जो सामान्य उपज से कहीं अधिक है। भगाली जी ने धन भी दिल खोल कर खर्च किया। सातों दिन सभी श्रोताओं के लिए भोजन का प्रबन्ध था। लगभग ३०० व्यक्ति प्रतिदिन भोजन करते रहे। वेद सम्बन्धी सात व्याख्यान यहाँ हुए जिन्हें सभी ने पसन्द किया।

भगाली जी की धर्मपत्नी ने हमारी जो सेवा की वह सदा स्मरण रहेगी। यहां श्री पं० बीरे जी भी मेरे साथ थे। यज्ञ उन्हीं के द्वारा कराया गया।

यहां बहुत-से व्यक्ति २५-२५ किलोमीटर की दूरी से आकर यज्ञ और प्रवचनों में भाग लेते रहे। यह कार्यक्रम २२ नवम्बर से २८ नवम्बर तक रहा।

मैं जिस समय सूरिनाम पहुंचा तब लगभग दो मास तक व्याख्यानों का कार्यक्रम चला। यह कार्यक्रम प्रायः शुक्र, शनि और रवि तीन दिन ही होता था। शेष सप्ताह के चार दिनों में दिन और रात्रि में कोई कार्यक्रम नहीं होता था। अतः दिन भर स्वाध्याय होता था। जब लौटने का समय हुआ तब पुनः एक बार प्रवचनों का कार्यक्रम शुरू हुआ। गयाना और ट्रीनीडाड की यात्रा से लौटते ही यह कार्यक्रम आरम्भ हो गया। इस बार

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—प्रकाशवती शास्त्री

धर्मपत्नी

●●●

एक दिन संस्कृत की कक्षा चल रही थी कि रामेश्वरी बहिन जी ने छात्राओं को समझाने के लिए एक श्लोक कृष्ण पट्ट पर लिख दिया। वह श्लोक था—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥

अर्थात् जिस देश अथवा परिवार में नारियों का सत्कार होता है वहां सारे देवता अर्थात् दिव्य शक्तियां, दिव्य गुण निवास करते हैं और जहां पर इनका मान नहीं होता वहां सारे काम निष्फल होते हैं।

इस श्लोक की व्याख्या को सुनकर सभी छात्राएं मुग्ध हो गईं। परन्तु आभा को संतोष नहीं हुआ। वह इतनी कुशाग्र बुद्धि छात्रा थी कि वह सदैव तर्क करती थी। शिक्षिका भी उससे बहुत प्रसन्न रहती थी, क्योंकि उसके प्रश्नों से कक्षा में गति आ जाती थी। आभा तुरन्त उठकर बोली, बहिन जी! नारी और नर तो समान हैं, गृहस्थ के दो पहिए हैं, यह आप ही ने तो बताया था। इस श्लोक में नारियों को इतना महत्त्व किसलिए दिया गया है?

वाह-वाह, यह भी खूब रही—साधना ने कहा—तुम्हें अपनी जाति की प्रशंसा ही नहीं सुहाती।

आभा—इसमें सुहाने न सुहाने की बात नहीं, मैं तो प्रत्येक विचार का कारण जानना चाहती हूं।

रामेश्वरी—साधु-साधु—बेटी तुम ठीक कहती हो। हमें प्रत्येक विचार अथवा सिद्धांत को तर्क की कसौटी पर कस के अवश्य देखना चाहिए। तभी तो हम उसे कार्यान्वित करने में समर्थ हो सकते हैं। हां, तो सुनो—आप मुझे यह बताइए कि विवाह के उपरान्त नारी का रूप क्या हो जाता है।

सरला—पत्नी

आभा—नहीं बहिन जी धर्मपत्नी।

रामेश्वरी—ठीक कहा—अब यह बताओ कि धर्मपत्नी शब्द का अर्थ क्या है।

आभा—धर्मस्य पत्नी—धर्म की रक्षा करने वाली।

सरला—परन्तु बहिन जी। पत्नी शब्द का प्रयोग तो अधिक होता है। जैसे हम कहते हैं 'पति-पत्नी'। इसमें तो केवल पत्नी शब्द आया है धर्मपत्नी नहीं।

रामेश्वरी (हंसकर)—पर बेटी पत्नी शब्द का भी वही अर्थ है।

आभा—हां हां बहिन जी। आपने व्याकरण के पाठ में हमें पढ़ाया था 'पत्युर्नौ यज्ञसंयोगे' यज्ञ अर्थात् धर्म के सम्बन्ध में ही पति शब्द से पत्नी बनाने के लिए इस में 'नी' का प्रयोग होता है।

रामेश्वरी—और इस प्रकार पत्नी शब्द में धर्मपत्नी का भाव निहित हो गया; ठीक है न?

साधना—हां हां तभी तो पति शब्द का प्रयोग तो सभापति आदि में भी होता है परन्तु पत्नी का केवल धर्म के सम्बन्ध में।

रामेश्वरी—शाबास! तुम ठीक समझीं। अब आभा के प्रश्न का उत्तर स्वयमेव स्पष्ट हो जाएगा।

आभा—वह कैसे?

रमा—मैं बताती हूं।

रामेश्वरी—बताओ, बताओ।

रमा—तुमने पूछा था कि नारी को इस श्लोक में इतना महत्त्व क्यों दिया गया है। इसका उत्तर यह हुआ कि वह धर्म की रक्षा करती है। इसीलिए उसे धर्मपत्नी अथवा पत्नी का पद प्राप्त हुआ है। पति का अर्थ तो है रक्षा करने वाला परन्तु पत्नी के अर्थ में धर्म शब्द भी जोड़ा गया है।

रामेश्वरी—तो आप सब समझ गई होंगी कि मनु भगवान् ने नारी को किसलिए इतना मान दिया है? और आपने इतिहास में पढ़ा होगा कि हमारे देश में नारियों ने ही सदा धर्म की रक्षा की है। क्या आप लोग इसका कोई उदाहरण दे सकती हैं?

सरला—सीता, जनकनन्दिनी सीता।

रामेश्वरी—कैसे और कहां?

सुशीला—बहिन जी! यह मैं बताती हूं।

रामेश्वरी—हां हां, तुम्हीं बताओ।

सुशीला—सीता का राम के साथ वन में जाने का उद्देश्य ही यह था। इसलिए जब राम ने यह कहा—

निशचर हीन करौं महो, भुज उठाय प्रण कीन्ह।

तब सीता ने उन्हें स्मरण कराया कि उन्होंने वन में मुनियों के समान रहना है अतः राक्षसों को शस्त्र से नहीं, शास्त्रों के द्वारा वश में करना है।

इसी कारण उन्होंने विराधादि राक्षसों को सुमार्ग पर चला कर छोड़ दिया था। उनके प्राण हरण नहीं किए।

सरला—क्या उन्होंने रावण को नहीं मारा?

रामेश्वरी—मारा तो था परन्तु उसको समझाने की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चेष्टा भी कम नहीं की। हनुमान् और अंगद आदि दूतों ने उससे बार-बार निवेदन किया कि तुम सीता को लौटा कर राम से क्षमा मांग लो पर जब वह नहीं माना तो क्या करते ?

आभा—अजी उसको तो अपनी प्रजा ही उसके अत्याचारों से पीड़ित थी, उसने सगे भाई को लात मार दी। पत्नी की शिक्षा को नहीं माना।

सुशीला—तो इसका भाव यह हुआ कि राम ने रावण को विवश होकर मारा।

रमा—एक बात मैं बताऊं।

रामेश्वरी—हां हां, अवश्य ! अवश्य !

रमा—उन्होंने अपने शत्रु के भाई विभीषण को तो नहीं मारने दिया वरन् रावण का राज्य उसी को दे दिया। यह क्या कम उदारता का प्रमाण है ?

आभा—वह नहीं चाहते थे कि लंका पर अयोध्या वाले राज्य करें वरन् लंका वाले ही करें। कितनी उच्च कोटि की थी उनकी राजनीति।

रामेश्वरी—कोई अन्य उदाहरण।

कमला—द्रौपदी।

सुशीला—द्रौपदी ?

कमला—क्या भूल गई ? महाभारत का वनपर्व। जहां द्रौपदी ने कायर युधिष्ठिर को क्षात्रधर्म का उपदेश दिया है।

सुशीला—हां हां, उसने कहा था कि या तो शत्रुओं से युद्ध करके क्षात्रधर्म का पालन करो नहीं तो संन्यासी बन जाओ।

रामेश्वरी—कैसी बढ़िया चुनौती है, एक पत्नी की पति को धर्म की रक्षा करने के लिए।

रमा—तारा ने भी तो सुग्रीव को उसके भूले हुए कर्तव्य का ज्ञान करवाया था, जिसको वह राज्य के मद में भूल बैठा था।

रमा—तभी तो नारी को धर्मपत्नी कहा जाता है।

आभा—आप नाराज न हों, बहिन जी, तो एक बात कहूं।

रामेश्वरी—प्रसन्नता से।

आभा—आज हमारे देश की मंत्री-पत्नियां यदि अपने कर्तव्य का पालन करें तो देश का बेड़ा पार हो जाए।

सरला—मैं भी यही कहने वाली थी।

रमा—अजी वे क्या पत्नियां हैं वे तो पत्तियां है।

रामेश्वरी—मंत्री-पत्नियां ही क्यों ? शेष पत्नियां ही क्या कर रही हैं ? अच्छा छोड़ो इस विवाद को, घटी बज जाएगी। अब तुम राजपूत-काल का कोई उदाहरण दो।

रमा—राजपूत काल ?

सरला—क्यों जी आप सारंध्र को भूल गईं ?

रमा—सारंध्र वीर चम्पतराय की पत्नी, छत्रसाल की मां, जिसने मुगलों से घिरे घायल पति की आन बचाने के लिए उसकी छाती में उसी के कहने से तलवार घुसेड़ दी।

रामेश्वरी—शाबास, शाबास, खूब याद है आपको उस वीर पत्नी का इतिहास।

रमा—मुझे तो ऐसी कहानियां पढ़ने का सदा से शौक है।

रामेश्वरी—शुभ, अति शुभ। ऐसी कहानियां पढ़ने से ही तो मनुष्य के चरित्र का निर्माण होता है।

सरला—पर कौन पढ़ता है आजकल ऐसी कहानियां ? आजकल तो पढ़े जाते हैं गुलशन नन्दा के उपन्यास तथा सुषमा की गंदी फिल्मी कहानियां ?

रमा—और या फिर माया, मनोहर कहानियां।

रामेश्वरी—यही तो देश का दुर्भाग्य है। जो साहित्य चरित्र निर्माण का साधक होना चाहिए वही बाधक हो रहा है। हम अपने हाथों से अपनी भावी पीढ़ी को विष पिला रहे हैं, हमारी सरकार इस ओर जरा भी ध्यान नहीं देती। चलो छोड़ो, अब अपने विषय पर आओ। मैं तुम्हें बता रही थी कि पत्नी अथवा धर्मपत्नी शब्द पुकार पुकार कर घोषणा कर रहे हैं कि नारी ही पुरुष को सन्मार्ग पर ला सकती है। हमारे शास्त्रों में स्पष्ट लिखा है कि पुरुष विवाह इसीलिए करता है कि वह नारी की सहायता से ही त्रिवर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ और काम की सम्यक् प्रकार से सिद्धि करके मोक्ष का अधिकारी बनता है।

सरला—परन्तु बहिन जी ! आज की नारी तो पुरुष को अवनति की ओर ले जा रही है।

रमा—सो कैसे ?

सरला—यह तो बहिन जी बताएंगी।

रामेश्वरी—वह ऐसे कि पुरुष परिवार को सुखी बनाने के लिए ही तो रिश्वतखोरी अथवा भ्रष्टाचार का सहारा लेता है। धन का लोभी हो जाता है। यदि नारी पति की सीमित आय में ही निर्वाह करके घर को सुखी बना सके, अधिक चटक-मटक तथा शान-शौकत के पीछे पागल न बने तो पुरुष क्यों ऐसा करेगा। वरन् पुरुष को ललकार कर कहे—'मेरे घर में धर्म का धन आएगा अधर्म का नहीं। मैं भूखी रह लूंगी, फटे पुराने वस्त्र पहिन लूंगी, अपने हाथों से परिश्रम कर लूंगी पर अधर्म से प्राप्त धन की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखूंगी। नारी में इतना आत्म बल होना चाहिए कि पुरुष को अधर्म

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सत्यार्थ प्रकाश में क्या लिखा है ?

ईश्वर के अनेक नामों की व्याख्या

२८ मार्च के अंक में आप भूमिका में लिखे प्रेरक वाक्य पढ़ चुके हैं। अब प्रस्तुत है— ईश्वर के अनेक नामों की व्याख्या। असंख्य नामों में से कुछ नाम देकर ऋषि ने सत्य को प्रगट कर ज्ञान चक्षु खोलने का सफल प्रयत्न किया है। —संपादक

—(ओ३म्) यह ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है, क्योंकि इसमें जो अ, उ और म् तीनों अक्षर मिलकर एक (ओ३म्) समुदाय हुआ है। इस एक नाम से परमेश्वर के बहुत नाम आते हैं, जैसे—अकार से विराट्, अग्नि और विश्वादि। उकार से हिरण्यगर्भ, वायु और तैजसादि। मकार से ईश्वर, आदित्य और प्रज्ञादि नामों का वाचक और ग्राहक है। उसका ऐसा ही वेदादि सत्यशास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान किया है कि प्रकरणानुकूल ये सब नाम परमेश्वर ही के है।

—जब परमेश्वर अप्रसिद्ध और उसके तुल्य भी कोई नहीं तो उससे उत्तम कोई क्योंकर हो सकेगा, जहां जिसका ग्रहण करना उचित हो वहां उसी अर्थ का ग्रहण करना चाहिए।

—परमेश्वर का कोई भी नाम अनर्थक नहीं, जैसे लोक में दरिद्री आदि के धनपति आदि नाम होते हैं।

—आकाशवत् व्यापक होने से (खम्) और सबसे बड़ा होने से (ब्रह्म) ईश्वर का नाम है ॥१॥

—(ओ३म्) जिसका नाम है और जो कभी नष्ट नहीं होता, उसी की उपासना करनी योग्य है, अन्य की नहीं।

—सब वेदादि शास्त्रों में परमेश्वर का प्रधान और निज नाम (ओ३म्) को कहा है, अन्य सब गौणिक नाम हैं ॥३॥

—सब वेद सब धर्मानुष्ठानरूप तपश्चरण जिसका कथन और मान्य करते और जिसकी प्राप्ति की इच्छा करके ब्रह्मचर्याश्रम करते हैं उसका नाम 'ओम्' है।

—जो सब को शिक्षा देनेहारा सूक्ष्म से सूक्ष्म, स्वप्रकाश-स्वरूप, समाधिस्थ बुद्धि से जानने योग्य है, उसको परम पुरुष जानना चाहिये।

—स्वप्रकाश होने से 'अग्नि' विज्ञानस्वरूप होने से मनु' सबका पालन करने से 'प्रजापति' और परमैश्वर्य-वान् होने से 'इन्द्र' सब का जीवनमूल होने से 'प्राण' और निरन्तर व्यापक होने से परमेश्वर का नाम 'ब्रह्म' है।६।

—सब जगत् के बनाने से 'ब्रह्मा' सर्वत्र व्यापक होने से 'विष्णु' दुष्टों को दण्ड देके रुलाने से 'रुद्र' मंगलमय और सब का कल्याणकर्ता होने से 'शिव'। जो सर्वत्र व्याप्त अविनाशी स्वयं प्रकाशस्वरूप और प्रलय में सब का काल और काल का भी काल है, इसलिये परमेश्वर का नाम कालाग्नि है ॥

—जो एक अद्वितीय सत्यब्रह्म वस्तु है, उसी के इन्द्रादि सब नाम हैं।

—जैसे प्राण के वश सब शरीर [और] इन्द्रियां होती हैं वैसे परमेश्वर के वश में सब जगत् रहता है ॥११॥

—परमेश्वर का जन्म मरण कभी नहीं होता।

—जो ज्ञानस्वरूप, सर्वज्ञ, जानने, प्राप्त होने और पूजा करने योग्य है, इससे उस परमेश्वर का नाम 'अग्नि' है।

—जिसमें आकाशादि सब भूत प्रवेश कर रहे हैं अथवा जो इनमें व्याप्त होके प्रविष्ट हो रहा है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'विश्व' है।

—जिसमें सूर्यादि तेज वाले लोक उत्पन्न होके जिसके आधार रहते हैं अथवा जो सूर्यादि तेजस्वरूप पदार्थों का गर्भ नाम उत्पत्ति और निवासस्थान है, इससे उस परमेश्वर का नाम हिरण्यगर्भ है।

—जो चराऽचर जगत् का धारण, जीवन और प्रलय करता और सब बलवान् है, इससे उस ईश्वर का नाम 'वायु' है।

—जो आप स्वयं प्रकाश और सूर्यादि तेजस्वी लोकों का प्रकाश करने वाला है, इससे उस ईश्वर का नाम 'तैजस' है।

—जिसका सत्य विचार शील ज्ञान और अत्यन्त ऐश्वर्य है, इससे उस परमात्मा का नाम 'ऐश्वर्य है।

—जिसका विनाश कभी न हो उसी की 'आदित्य' संज्ञा है।

—जो निर्भ्रान्त ज्ञान युक्त सब चराऽचर जगत् के व्यवहार को यथावत् जानता है इससे ईश्वर का नाम 'प्राज्ञ' है।

—स्तुति, प्रार्थना, उपासना श्रेष्ठ ही की की जाती है। श्रेष्ठ उसको कहते हैं जो गुण, कर्म, स्वभाव और सत्य सत्य व्यवहारों मे सब से अधिक हो। उन सब श्रेष्ठों में भी जो अत्यन्त श्रेष्ठ उसको परमेश्वर कहते हैं। जिसके तुल्य कोई न हुआ, न है और न होगा। जब तुल्य नहीं तो उससे अधिक क्योंकर हो सकता है ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—जैसे परमेश्वर के सत्य, न्याय, दया, सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञात्वादि अनन्त गुण हैं वैसे अन्य किसी जड़ पदार्थ वा जीव के नहीं हैं।

—जो पदार्थ सत्य है उसके गुण, कर्म, स्वभाव भी सत्य होते हैं।

—जो सब से स्नेह करके और सब को प्रीति करने योग्य है इससे उस परमेश्वर का नाम 'मित्र' है।

—जो आप्त योगी विद्वान् मुक्ति की इच्छा करने वाले मुक्त और धर्मात्माओं का स्वीकारकर्त्ता अथवा जो शिष्ट मुमुक्ष मुक्त और धर्मात्माओं से ग्रहण किया जाता है वह ईश्वर 'वरुण' संज्ञक है।

—परमेश्वर सब से श्रेष्ठ है, इसीलिए उसका नाम 'वरुण' है। सत्य न्याय के करनेहारे मनुष्यों का मान्य और पाप तथा पुण्य करने वालों को पाप और पुण्य के फलों का यथावत् सत्य सत्य नियमकर्त्ता है इसी से उस परमेश्वर का नाम 'अर्यमा' है।

—जो अखिल ऐश्वर्ययुक्त है इससे उस परमात्मा का नाम 'इन्द्र' है।

—चर और अचररूप जगत् में व्यापक होने से परमात्मा का नाम 'विष्णु' है।

—जो सब में व्यापक परमेश्वर है, वह (नः) हमारा कल्याणकारक (भवतु) हो।

—जो आप की वेदस्थ यथार्थ आज्ञा है उसी का मैं सबके लिये उपदेश और आचरण भी करूंगा सत्य बोलूं, सत्य मानूं और सत्य ही करूंगा सो आप मेरी रक्षा कीजिये सो आप मुझ आप्त सत्यवक्ता की रक्षा कीजिये जिससे आप की आज्ञा में मेरी बुद्धि स्थिर होकर विरुद्ध कभी न हो। जो आप की आज्ञा है वही धर्म और जो उससे विरुद्ध वही अधर्म है। धर्म से सुनिश्चित और अधर्म से घृणा सदा करूं ऐसी कृपा मुझ पर कीजिये, मैं आपका बड़ा उपकार मानूंगा इस संसार में तीन प्रकार के दुःख है—एक 'आध्यात्मिक' जो आत्मा शरीर में अविद्या, राग द्वेष, मूर्खता और ज्वर पीड़ादि होते हैं। दूसरा 'आधिभौतिक' जो शत्रु, व्याघ्र और सर्पादि से प्राप्त होता है। तीसरा 'आधिदैविक' अर्थात् जो अतिवृष्टि, अतिशीत, अति उष्णता, मन और इन्द्रियों की अशान्ति से होता है। इन तीन प्रकार के क्लेशों से आप हम लोगों को दूर करके कल्याणकारक कर्मों में सदा प्रवृत्त रखिये। आप ही कल्याणस्वरूप, सब संसार के कल्याणकर्त्ता और धार्मिक मुमुक्षुओं को कल्याण के दाता हैं। इसलिये आप स्वयं अपनी करुणा से सब जीवों के हृदय में प्रकाशित हूजिये कि जिससे सब जीव धर्म का आचरण और अधर्म को छोड़ के परमानन्द को प्राप्त हों और दुःखों से पृथक् रहें।

—स्वप्रकाशरूप सब के प्रकाश करने से परमेश्वर का नाम 'सूर्य' है।

—जो सब जीव आदि से उत्कृष्ट और जीव प्रकृति तथा आकाश से भी अतिसूक्ष्म और सब जीवों को अन्तर्यामी आत्मा है इससे ईश्वर का नाम 'परमात्मा' है।

—सामर्थ्य वाले का नाम ईश्वर है। ईश्वरों अर्थात् समर्थों में समर्थ, जिसके तुल्य कोई भी न हो उसका नाम 'परमेश्वर' है।

—जो सब जगत् की उत्पत्ति करता है इसलिये परमेश्वर का नाम 'सविता' है।

—जो शुद्ध जगत् को क्रीडा कराने धार्मिकों को जिताने की इच्छायुक्त (व्यवहार) सब चेष्टा के साधनोपसाधनों का दाता (द्युति) स्वयंप्रकाशस्वरूप सब का प्रकाशक (स्तुति) प्रशंसा के योग्य (मोद) आप आनन्दस्वरूप और दूसरों को आनन्द देनेहारा (मद) मदोन्मत्तों का ताड़नेहारा (स्वप्न) सब के शयनार्थ रात्रि और प्रलय का करने हारा (कान्ति) कामना के योग्य और (गति) ज्ञानस्वरूप है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'देव' है।

—जो अपनी व्याप्ति से सबका आच्छादन करे इससे उस परमेश्वर का नाम 'कुबेर' है।

—जो सब विस्तृत जगत् का विस्तार करने वाला है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'पृथिवी' है।

—जो सबका जनक और सब सुखों का देने वाला है इसलिये भी परमात्मा का नाम 'जल' है।

—जो सब ओर से सब जगत् का प्रकाशक है इसलिये उस परमात्मा का नाम 'आकाश' है।

—जो सब को भीतर रखने सब को ग्रहण करने योग्य चराचर जगत् का ग्रहण करने वाला है, इससे ईश्वर के 'अन्न' 'अन्नाद' और 'सत्ता' नाम हैं। जैसे गूलर के फल में कृमि उत्पन्न होके उसी में रहते और नष्ट हो जाते हैं वैसे परमेश्वर के बीच में सब जगत् की अवस्था है।

—जिसमें सब आकाशादि भूत बसते हैं और जो सब में वास कर रहा है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'वसु' है।

—जो दुष्ट कर्म करनेहारों को रुलाता है इससे उस परमेश्वर का नाम 'रुद्र' है।

—जीव जिसका मन से ध्यान करता उसको वाणी से बोलता उसको कर्म से करता, जिसको कर्म से करता उसी को प्राप्त होता है। इससे क्या सिद्ध हुआ कि जो जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। जब दुष्ट कर्म करने वाले जीव ईश्वर की न्यायरूप व्यवस्था से दुःखरूप फल पाते तब रोते हैं और इसी प्रकार ईश्वर उनको रुलाता है, इसलिये परमेश्वर का नाम 'रुद्र' है।

—सब जीवों में व्यापक परमात्मा का नाम 'नारायण' है।

सभी दिन प्रभु के नाम पर हैं।

—जो आनन्दस्वरूप और सब को आनन्द देने वाला है इसलिये ईश्वर का नाम 'चन्द्र' है।

—जो आप मंगलस्वरूप और सब जीवों के मंगल का कारण है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'मंगल' है।

—जो स्वयं बोधस्वरूप और सब जीवों के बोध का कारण है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'बुध' है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—जो बड़ों से बड़ा और बड़े आकाशादि ब्रह्माडों का स्वामी है उस से उस परमेश्वर का नाम 'बृहस्पति' है।

—जो अत्यन्त पवित्र और जिसके संग से जीव भी पवित्र हो जाता है इसलिये ईश्वर का नाम 'शुक्र' है।

—जो सब में सहज से प्राप्त धैर्यवान् है इससे उस परमेश्वर का 'शनैश्चर' है।

—जो एकान्तस्वरूप जिसके स्वरूप में दूसरा पदार्थ संयुक्त नहीं। जो दुष्टों को छोड़ने और अन्य को छुड़ाने हारा है इससे परमेश्वर का नाम 'राहु' है।

—जो सब जगत् का निवासस्थान, सब रोगों से रहित मुमुक्षुओं को मुक्ति समय में सब रोगों से छुड़ाता है इस लिये उस परमात्मा का नाम 'केतु' है।

—जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है, और ब्रह्मा से लेके सब मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम 'यज्ञ' है क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है।

—जो जीवों को देने योग्य पदार्थों का दाता और ग्रहण करने योग्यों का ग्राहक है इससे उस ईश्वर का नाम 'होता' है।

—जिसने अपने में सब लोकलोकान्तरों को नियमों से बद्ध कर रक्खे और सहोदर के समान सहायक है इसी से अपनी-अपनी परिधि वा नियम का उल्लंघन नहीं कर सकते। जैसे भ्राता भाइयों का सहायकारी होता है वैसे परमेश्वर भी पृथिव्यादि लोकों के धारण रक्षक और सुख देने से 'बन्धु' संज्ञक है।

—जो सब का रक्षक जैसा पिता अपने सन्तानों पर सदा कृपालु होकर उन्नति चाहता है वैसे ही परमेश्वर सब जीवों की उन्नति चाहता है इससे उसका नाम 'पिता' है।

—जो पिताओं का भी पिता है इससे उस परमेश्वर का नाम 'पितामह' है।

—जो पिताओं के पितरों का पिता है इससे परमेश्वर का नाम 'प्रपितामह' है।

—जैसे पूर्णकृपायुक्त जननी अपने सन्तानों का सुख और उन्नति चाहती है वैसे परमेश्वर भी सब जीवों की बढ़ती चाहता है इससे परमेश्वर का नाम 'माता' है।

—जो सत्य आचार का ग्रहण करानेहारा और सब विद्याओं की प्राप्ति का हेतु होके सब विद्या प्राप्त कराता है इससे परमेश्वर का नाम 'आचार्य' है।

—जो सत्यधर्म-प्रतिपादक सकल विद्यायुक्त वेदों का उपदेश करता; सृष्टि की आदि में अग्नि, वायु, आदित्य अंगिरा और ब्रह्मादि गुरुओं का भी गुरु और जिसका नाश कभी नहीं होता इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'गुरु' है।

—जो सब प्रकृति के अवयव आकाशादि भूत परमाणुओं को यथायोग्य मिलाता, शरीर के साथ जीवों का सम्बन्ध करके जन्म देता और स्वयं कभी जन्म नहीं लेता इससे उस ईश्वर का नाम 'अज' है।

—जो सम्पूर्ण जगत् को रच के बढ़ाता है इसलिये परमेश्वर का नाम 'ब्रह्मा' है।

—साधु होने से परमेश्वर का नाम 'सत्य' है।

—जो सब का जानने वाला है इससे परमेश्वर का नाम 'ज्ञान' है।

—जिसका अन्त अवधि मर्यादा अर्थात् इतना लम्बा, चौड़ा, छोटा, बड़ा है ऐसा परिमाण नहीं है इसलिए परमेश्वर का नाम 'अनन्त' है।

—जिसके पूर्व कुछ न हो और परे हो, उसको आदि कहते हैं।

—जिसका आदिकारण कोई भी नहीं है इसलिये परमेश्वर का नाम अनादि' है।

—जो आनन्दस्वरूप जिसमें सब मुक्त जीव आनन्द को प्राप्त होते और सब धर्मात्मा जीवों को आनन्दयुक्त करता है इससे ईश्वर का नाम 'आनन्द' है।

—जो सदा वर्तमान अर्थात् भूत, भविष्यत, वर्त्तमान कालों में जिसका बोध न हो उस परमेश्वर को सत्' कहते हैं।

—जो चेतनरवरूप सब जीवों को चेताने और सत्यासत्य का जाननेहारा है इसलिये उस परमात्मा का नाम 'चित्' है। इन तीनों शब्दों के विशेषण होने स परमेश्वर को 'सच्चिदानन्दस्वरूप' कहते हैं।

—जो निश्चल अविनाशी है सो 'नित्य' शब्दवाच्या ईश्वर है।

—जो स्वयं पवित्र सब अशुद्धियों से पृथक् और सब को शुद्ध करने वाला है इससे उस ईश्वर का नाम 'शुद्ध' है।

—जो सदा सब को जाननेहारा है। इससे ईश्वर का नाम 'बुद्ध' है।

—सर्वदा अशुद्धियों से अलग और सब मुमुक्षुओं को क्लेश से छुड़ा देता है इसलिए परमात्मा का नाम 'मुक्त' है।

—इसी कारण से परमेश्वर का स्वभाव 'नित्यशुद्धबु - मुक्त' है।

—जिसका आकार कोई भी नहीं और न कभी शरीर-धारण करता है। इसलिये परमेश्वर का नाम 'निराकार' है।

—जो व्यक्ति अर्थात् आकृति, म्लेच्छाचार, दुष्टकामना और चक्षुरादि इन्द्रियों के विषयों के पथ से पृथक् है इसमे ईश्वर का नाम 'निरंजन' है।

—जो प्रकृत्यादि जड़ और सब जीव प्रख्यात पदार्थों का स्वामी वा पालन करनेहारा है इससे उस ईश्वर का नाम 'गणेश' वा 'गणपति' है।

—जो संसार का अधिष्ठाता है उस परमेश्वर का नाम 'विश्वेश्वर' है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—जो सब व्यवहारों में व्याप्त और सब व्यवहारों का आधार हो के भी किसी व्यवहार में अपने स्वरूप को नहीं बदलता इससे परमेश्वर का नाम 'कूटस्थ' है।

—जो सब जगत् के बनाने में समर्थ है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'शक्ति' है।

—जिसका सेवन सब जगत्, विद्वान् और योगीजन करते हैं उस परमात्मा का नाम 'श्री' है।

—जो वेदादि शास्त्र व धार्मिक विद्वान् योगियों का लक्ष्य अर्थात् देखने योग्य है इससे उस परमेश्वर का नाम 'लक्ष्मी' हैं।

—अपने ही सामर्थ्य से अपने सब काम पूरा करता है इसलिये उस परमात्मा का नाम 'सर्वशक्तिमान्' है।

—जिसका न्याय अर्थात् पक्षपातरहित धर्म करने ही का स्वभाव है इससे उस ईश्वर का नाम 'न्यायकारी' है।

—जो अभय का दाता सत्याऽसत्य सर्व विद्याओं का जानने, सब सज्जनों की रक्षा करने और दुष्टों को यथा-योग्य दण्ड देने वाला है इससे परमात्मा का नाम 'दयालु' है।

—सजातीय जैसे मनुष्य का सजातीय दूसरा मनुष्य होता है विजातीय जैसे मनुष्य से भिन्न जाति वाला वृक्ष, पाषाणादि। स्वगत अर्थात् शरीर से जैसे आँख, नाक, कान आदि अवयवों का भेद है वैसे दूसरे स्वजातीय ईश्वर, विजातीय ईश्वर वा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक परमेश्वर है, इससे परमात्मा का नाम 'अद्वैत' है।

—जो शब्द, स्पर्श, रूपादि गुणरहित है इससे परमात्मा का नाम 'निर्गुण' है।

—जो सब को ज्ञान सर्वसुख पवित्रता अनन्त बलादि गुणों से युक्त है इसलिये परमेश्वर का नाम 'सगुण' है। ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जो सगुणता और निर्गुणता से पृथक हो।

—जो सब प्राणि और अप्राणिरूप जगत् के भीतर व्यापक होके सब का नियम करता है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'अन्तर्यामी' है।

—जो धर्म ही में प्रकाशमान और अधर्म से रहित धर्म ही का प्रकाश करता है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'धर्मराज' है।

—जो सब प्राणियों के कर्मफल देने की व्यवस्था करता और सब अन्यायों से पृथक् रहता है इसलिये परमात्मा का नाम 'यम' है।

—जो समग्र ऐश्वर्य से युक्त वा भजने के योग्य है, इसी-लिए उस ईश्वर का नाम 'भगवान्' है।

—जो मनु अर्थात् विज्ञानशील और मानने योग्य है इसलिये उस ईश्वर का नाम 'मनु' है।

—जो सब जगत में पूर्ण हो रहा है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'पुरुष' है।

—जो जगत् का धारण और पोषण करता है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'विश्वम्भर' है।

—जो जगत् के सब पदार्थ और जीवों की संख्या करता है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'काल' है।

—जो उत्पत्ति और प्रलय से शेष अर्थात् बच रहा है इसलिये उस परमात्मा का नाम 'शेष' है।

—जो सत्योपदेशक सकल विद्यायुक्त सब धर्मात्माओं को प्राप्त होता और धर्मात्माओं से प्राप्त होने योग्य छल कपटादि से रहित है, इसलिये उस परमात्मा का नाम 'आप्त' है।

—जो कल्याण अर्थात् सुख का करनेहारा है इससे उस ईश्वर का नाम 'शंकर' है।

—जो महान् देवों का देव अर्थात् विद्वानों का भी विद्वान्, सूर्यादि पदार्थों का प्रकाशक है इसलिए उस परमात्मा का नाम 'महादेव' है।

—जो सब धर्मात्माओं, मुमुक्षुओं और शिष्टों को प्रसन्न करता और सब को कामना के योग्य है इसलिये ईश्वर का नाम 'प्रिय' है।

—जो आप से आप ही है, किसी से कभी उत्पन्न नहीं हुआ है इससे उस परमात्मा का नाम 'स्वयम्भू' है।

—जो वेदद्वारा सब विद्याओं का उपदेष्टा और वेत्ता है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'कवि' है।

—जो कल्याणस्वरूप और कल्याण का करनेहारा है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'शिव' है।

—जैसे परमेश्वर के अनन्त गुण कर्म स्वभाव हैं वैसे उसके अनन्त नाम भी हैं। मेरे लिखे नाम समुद्र के सामने बिन्दुवत् हैं अन्य पदार्थों का ज्ञान भी उन्हीं को पूरा-पूरा हो सकता है जो वेदादिशास्त्रों को पढ़ते हैं।

—जो न्याय, पक्षपातरहित सत्य वेदोक्त ईश्वर की आज्ञा है उसी का यथावत् सर्वत्र और सदा आचरण करा नाही मंगला चरण कहाता है।

—हे सन्तानो! जो 'अनवद्य' आनिन्दनीय अर्थात् धर्म-युक्त कर्म है वे ही तुमको करने योग्य हैं अधर्मयुक्त नहीं।

—जो वैदिक लोग वेद के आरम्भ में 'हरिः ओ३म्' लिखते और पढ़ते हैं यह पौराणिक और तान्त्रिक लोगों की मिथ्या कल्पना से सीखे हैं।

—वेदादि शास्त्रों में 'हरि' शब्द आदि में कहीं नहीं।

संसार में सत्य-धर्म-ज्ञान का सन्देश
फैलाने के लिए
दयानन्द संस्थान द्वारा प्रकाशित
जन-ज्ञान (साप्ताहिक) के सदस्य बनाइए

नोट : ७ मार्च शिवरात्री की छुट्टी के कारण साप्ताहिक नहीं छपा था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—डॉ. सुनीति, एम्० ए०

महर्षि दयानन्द की वेद संबन्धी मान्यताएं

डा. सुनीति एम. ए., पीएच. डी. दक्षिण भारत की हिन्दी एवं संस्कृत की प्रकाण्ड विदुषी महिला हैं। उस्मानिया विश्वविद्यालय में एम. ए. हिन्दी में आपने नया कीर्तिमान स्थापित किया है। आप गंभीर विचारक, परिष्कृत लेखिका एवं ओजस्वी वक्ता भी हैं।

आपके अनुपम मधुर वेद मंत्रों के पाठ को सुनकर श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। आप महाविद्यालय में प्राध्यापिका हैं और नगर आर्यसमाज हैदराबाद की प्रधान हैं। —सम्पादक

आज के युग में जब कि विज्ञान अपने चरम उत्कर्ष पर पहुंच रहा है केवल तथाकथित श्रद्धा और परम्परागत मान्यता के आधार पर किसी भी बात को सत्य मानने के लिए आज का शिक्षित समुदाय प्रस्तुत नहीं है। वह हर वस्तु को वैज्ञानिक कसौटी पर कसना चाहता है।

ऋषि दयानन्द के आगमन से पूर्व देश और विदेशस्थ जन परम्परागत मान्यताओं और अन्धविश्वासों के जाल में फँस कर नाना प्रकार के स्वजनित दुःखों से ग्रस्त एवं परित्रस्त थे। यदि यह कहा जाए कि ज्ञान विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि वर्तमान युग को महिष दयानन्द ने ही दी तो यह बात अपने आप में एक सत्य और पूर्ण तथ्य को प्रस्तुत करती है।

ऋषि के आगमन से पूर्व ज्ञान विज्ञान की दो स्थितियाँ स्पष्टतः परिलक्षित होती हैं। एक ओर तो कुछ लोग अन्धविश्वास में फंसकर अज्ञान के तमस् पूर्ण मार्ग में फंसे हुए थे तो दूसरी ओर आधुनिक विज्ञान के प्रणेता ईश्वरीय सत्ता में ही विश्वास नहीं करते थे। यद्यपि इन दोनों की स्थितियों में पूर्व और पश्चिम का अन्तर था फिर भी यथार्थ ज्ञान से परे दोनों की अज्ञानता की स्थिति विपरीत दिशा में होते हुए भी एक सी ही थी। एक रेत को ही शक्कर मान रहा था तो दूसरा शक्कर के अस्तित्व को अस्वीकार कर रहा था। एक का आधार भावना थी और दूसरे का आधार भ्रान्त धारणा थी।

ऋषि दयानन्द ने दोनों पक्षों को तराश कर ज्ञान-विज्ञान की नई दृष्टि युग को प्रदान की। किन्तु इसके साथ यह बात भी उतनी ही सत्य है कि ऋषि दयानन्द ने कोई नई बात या कोई नया सिद्धान्त संसार के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया, अपितु ब्रह्मा से लेकर जैमिनि और व्यास पर्यन्त प्राचीन ऋषि मुनियों ने जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था उन्हीं मन्तव्यों, सिद्धान्तों और मान्यताओं को अपनी शैली में नए परिप्रेक्ष्य में प्यारे ऋषि ने प्रस्तुत कर दिया। या यों कहें कि ऋषि ने हमें एक ऐसी दृष्टि दी जिससे हम आत्मा, परमात्मा और प्रकृति के यथार्थ दर्शन कर सकें।

महिष दयानन्द की दिव्य दृष्टि संसार के उस बिन्दु पर जाकर स्थिर हो जाती है जो इस स्थल जगत् से भी परे एक परम सूक्ष्म शक्ति है। जो इस सृष्टि का निमित्त कारण व कर्त्ता है। ज्ञान के क्षेत्र में बढ़ते बढ़ते संवत् १८९० की शिवरात्रि की घटना से लेकर अलखनन्दा की बर्फीली घाटी और घने जंगलों में भटकते हुए अन्त में मथुरा में गुरु विरजानन्द के द्वार पर पहुँचकर उनकी वह दृष्टि उसी वेद पर जाकर स्थिर हो जाती है। इसी वेद के एक भाग यजुर्वेद को शिवरात्रि की प्रसिद्ध घटना से दो वर्ष पूर्व ही वे कण्ठाग्र भी कर चुके थे।

इसी वेद ज्ञान के प्रचार व प्रसार में महर्षि ने अपना जीवन समर्पित कर दिया। इस समर्पण के पीछे गुरुवर्य विरजानन्द दण्डी का वह उद्बोधन कार्य करता रहा जिसे गुरु दक्षिणा के रूप में दण्डी स्वामी ने अपने होनहार शिष्य से मांगा था।

एक सर्वव्यापक निराकार अनादि ईश्वर और दूसरा ज्ञान विज्ञान का आदि स्रोत नित्य ज्ञान, ये ही वे दो सार थे जिन्हें महर्षि ने नए परिप्रेक्ष्य में या यथार्थ रूप में जाना और विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया।

अपने इसी तत्त्व को महर्षि ने आर्य समाज के पहले और तीसरे नियम में आर्य समाज की भूमिका या नींव के रूप में प्रस्तुत कर दिया—

सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है और वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है।

आर्यसमाज के संस्था रूप के लिए यह एक नियम है पर वास्तव में यह ऋषि का विश्वव्यापी उद्घोष है कि सब सत्य विद्या और जो पदार्थ हैं वे सब वेद विद्या से ही जाने जा सकते हैं, क्योंकि इस विद्या या ज्ञान का दाता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अथवा आदि मूल एक मात्र परमेश्वर से अन्य दूसरा कोई हो ही नहीं सकता। इससे स्पष्ट हो जाता है कि महर्षि की दृष्टि में वेद ईश्वरीय ज्ञान है, वेद अपौरुषेय हैं। ज्ञान का निर्माण मनुष्य की आत्मा नहीं कर सकती।

स्वामी सत्यानन्द लिखित श्रीमद्दयानन्द प्रकाश का यह अनुच्छेद ज्ञातव्य है। "स्वामी जी ने निवेदन किया— गुरुदेव! यह सेवक अपने मन सहित तन को आपके चरणों में अर्पित किए हुए है। श्रीमुख से जो भी आदेश होगा उसे शिरोधार्य करूंगा। आजीवन निभाऊंगा, गुरु महाराज! आज्ञा कीजिए। अपने प्यारे शिष्य के प्रोत्साहन पूर्ण वाक्य सुनकर विरजानन्द जी का रोम-रोम हर्षित हो गया। उनके हृदय में शिष्य स्नेह का स्रोत प्रबलता से प्रवाहित होने लगा। उन्होंने फिर आशीर्वादपूर्वक कहा— वत्स! भारत देश में दीन हीन जन अनेकविध दुःख पा रहे हैं। जाओ, उनका उद्धार करो। मतमतान्तरों के कारण जो कुरीतियाँ प्रचलित हो गई हैं उनका निवारण करो। आर्य जनता की बिगड़ी हुई दशा को सुधारो। आर्य सन्तान का उपकार करो। ऋषि शैली प्रचलित करके वैदिक ग्रन्थों के पठन पाठन में लोगों को प्रवृत्तिशील बनाओ। गंगा-यमुना के निरन्तर गतिशील प्रवाह की भांति लोकहित कामना से क्रियात्मक जीवन बिताओ। प्रिय पुत्र! गुरु दक्षिणा में यही वस्तु मुझे दान करो। अन्य किसी सांसारिक वस्तु की मुझे चाह नहीं है।"

बस, गुरु के इस आदेश को शिरोधार्य कर महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद की वाणी इस युग में झंकृत कर दी, जिस स्वर के सामने संसार के सारे स्वर बेसुरे प्रतीत होते हैं। स्वामी दयानन्द के संपूर्ण दर्शन का आधार है वेद और ईश्वर। एक साधन है तो दूसरा साध्य।

महर्षि की वेद संबन्धी मान्यताओं से उन लोगों की आंखें खुल गईं जो वेदों को गडरियों के गीत बतलाते थे। देखते-देखते हम देखने लगे हैं कि आज विश्व मस्तिष्क की आंखें इस अद्भुत ज्ञान की ओर आकृष्ट हो रही हैं।

यह सिद्धान्त सर्व मान्य है कि अभाव में भाव और भाव में अभाव सभव नहीं। जब संसार में ज्ञान था ही नहीं तो फिर उसका होना कदापि संभव नहीं। अतः वह ज्ञान जिसका सम्बन्ध कर्ता और उसके क्रियमाण जगत् से है वह कर्ता अर्थात् सृष्टिकर्ता परमेश्वर में सदा वर्तमान रहता है।

इस संबन्ध मे कितने ही पुरुष ऐसी शंका करते हैं कि वेदों में शब्द, छन्द, पद और वाक्यों के योग होने से वेद नित्य नहीं हो सकते। जैसे बिना बनाये घड़ा नहीं बनता इसी प्रकार वेदों को भी किसी ने बनाया होगा। क्योंकि बनाने से पहले नही थे और प्रलय के अन्त में भी नहीं रहेंगे। इससे वेदों को नित्य मानना ठीक नहीं है।

इसके उत्तर में महर्षि कहते हैं कि ऐसा कहना आपको उचित नहीं। क्योंकि शब्द दो प्रकार का होता है एक नित्य दूसरा कार्य। इसमें से जो शब्द अर्थ और संबन्ध परमेश्वर के ज्ञान में हैं वे सब नित्य ही होते हैं। और जो हम लोगों की कल्पना से उत्पन्न होते हैं वे कार्य होते हैं। क्योंकि जिसका ज्ञान और क्रिया स्वभाव से सिद्ध और अनादि है उसका सब सामर्थ्य भी नित्य ही होता है, इससे वेद भी उसकी विद्या स्वरूप होने से नित्य ही है क्योंकि ईश्वर की विद्या अनित्य कभी नहीं हो सकती। तो फिर प्रश्न उठता है—

जब सब जगत् के परमाणु अलग-अलग होकर कारण-रूप हो जाते हैं तब स्थूल जगत् का अभाव हो जाता है। उसमें वेद ग्रन्थों का भी अभाव हो जायगा। फिर वेद नित्य कैसे कहे जा सकते हैं? इस के उत्तर में स्वामी जी का कथन है कि—

ये बात पुस्तक, कागज, स्याही, लिपि अर्थात् अक्षरों की बनावट पर घटती है किन्तु वेद शब्द अर्थ सम्बन्ध स्वरूप हैं। इससे वे ईश्वर के ज्ञान में सदा बने रहते हैं। और जो कागज स्याही लिपि है वह हमारी बनाई है इसीलिए वह पुस्तक रूप में अनित्य है।

जैसे इस कल्प की सृष्टि में शब्द व अक्षर अर्थ और संबन्ध वेदों में है इसी प्रकार वे पूर्व कल्प में थे और आगे भी होंगे। उनके एक अक्षर का भी विपरीत भाव कभी नहीं होता। सो ऋग्वेद से लेकर चारों वेदों की सहिता अब इस प्रकार की है कि इनमें शब्द, अर्थ संबन्ध, पद और अक्षरों का जिस क्रम से वर्तमान है इसी प्रकार का क्रम सब दिन बना रहता है। क्योंकि ईश्वर का ज्ञान नित्य है। उसकी वृद्धि, क्षय और विपरीतता कभी नहीं होती। इस कारण से वेदों को नित्य स्वरूप ही मानना चाहिए। यह मान्यता महर्षि की ही नहीं है अपितु पाणिनीय व्याकरण, गण पाठ, महाभाष्य, जैमिनि, कणाद, गौतम, पतंजलि, कपिल, कृष्ण द्वैपायन व्यासादि के प्रमाणों से महर्षि ने वेद के नित्यत्व को पूर्णतः प्रतिपादित किया है।

वेद की नित्यता की सिद्धि के लिए वेद को ईश्वरीय ज्ञान ही मानना होगा। इस संदर्भ में आज भी अनेक आर्य विद्वान् इस यथार्थ को गले से नीचे उतार नहीं पाते। परन्तु महर्षि ने अकाट्य तर्कों द्वारा वेद को ईश्वरीय ज्ञान के रूप में सिद्ध किया है। वेद ईश्वरीय ज्ञान के रूप में स्वयं सिद्ध और प्रसिद्ध हैं—इस संबन्ध में महर्षि ने यजुर्वेद और अथर्ववेद के दो मन्त्र "तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत" तथा "यस्मादृचो अपातक्षन्" आदि का प्रमाण देकर बतलाया कि वेद इश्वरीय ज्ञान हैं। वेद किसने उत्पन्न किए हैं? इसका उत्तर देते हुए महर्षि कहते हैं "सत् चित् आनन्द लक्षणों से युक्त पुरुष जो सब जगह में परिपूर्ण हो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रहा है, जो सब मनुष्यों को उपासना के योग्य, इष्टदेव और सब सामर्थ्य से युक्त है उसी परब्रह्म से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ये चारों वेद उत्पन्न हुए हैं।" एक दूसरी जगह वेदमन्त्र प्रस्तुत करते हुए महर्षि लिखते हैं कि वेद द्वारा ईश्वर स्वयं रूपकालंकार में वेदों की उत्पत्ति का प्रकाश करते हैं कि—अथर्ववेद मेरे मुख के तुल्य, सामवेद लोम के समान, यजुर्वेद हृदय के समान और ऋग्वेद प्राण के समान है।

वेद के प्रकट करने की प्रक्रिया को और स्पष्ट करते हुए ऋषि कहते हैं कि जैसे मनुष्य के शरीर से श्वास बाहर को आकर फिर भीतर को जाता है इसी प्रकार सृष्टि के आदि में ईश्वर वेदों को उत्पन्न करके संसार में प्रकाश करता है और प्रलय में संसार में वेद नहीं रहते परन्तु उसके ज्ञान के भीतर वे सदा बने रहते हैं बीजाङ्कुरवत्। जैसे बीज में अंकुर प्रथम ही रहता है वही वृक्ष रूप होके फिर भी बीज के भीतर रहता है उसी प्रकार से वेद भी ईश्वर के ज्ञान में सब दिन बने रहते हैं।

निराकार और मुख आदि से रहित ईश्वर से शब्द रूप वेद कैसे उत्पन्न हो सकते हैं, इस का उत्तर देते हुए महर्षि ने बतलाया है कि—सर्वशक्तिमान् परमेश्वर मुख और प्राण के बिना भी अपने अनन्त सामर्थ्य से सब काम यथावत् कर सकता है। जैसे मनुष्य के मन में मुखादि अवयव नहीं हैं तथापि जैसे उसके भीतर प्रश्नोत्तर आदि शब्दों का उच्चारण मानस व्यापार में होता है वैसे ही परमेश्वर में भी जानना चाहिए।

प्यारे ऋषि के ये तर्क कितने विज्ञानसम्मत और ज्ञानपूर्ण हैं। एक ओर ऋषि वेद का प्रमाण देते हैं, फिर ज्ञानपूर्वक तर्क से अपने पक्ष को प्रस्तुत करते हैं और फिर विज्ञान का आधार लेकर सृष्टिक्रम और प्राकृतिक पदार्थों के उदाहरणों द्वारा अपने पक्ष का पोषण करते हैं।

महर्षि जहां वेद ज्ञान को नित्य और ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं वहां वे वेद को ही ज्ञान का आदि स्रोत भी मानते हैं। क्योंकि आज भी हम देखते हैं कि हमें ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब हम किसी से ज्ञान प्राप्त करते हैं। किसी से ज्ञान प्राप्त किये, किसी से बिना सुने या बिना देखे हमें किसी प्रकार का ज्ञान प्राप्त नहीं होता।

जैसे मनुष्य ने व्याकरण आदि शास्त्र रचे है वैसे ही वह ज्ञान की भी सृष्टि कर सकता है। इसके उत्तर में महर्षि कहते हैं—जब ईश्वर ने प्रथम वेद रचे हैं उनको पढ़ने के पश्चात् ही ग्रंथ रचने का सामर्थ्य किसी मनुष्य को हो सकता है। उसके पढ़ने और ज्ञान के बिना कोई भी मनुष्य विद्वान् नहीं हो सकता! जैसे इस समय में किसी शास्त्र को पढ़के, किसी का उपदेश सुनके और मनुष्यों के परस्पर व्यवहारों को देखके ही मनुष्यों को ज्ञान होता है, अन्यथा कभी नहीं होता। इन युक्तियों के उपरान्त महर्षि लिखते हैं कि जैसे किसी मनुष्य के बालक को जन्म से एकान्त में रखके उसको अन्न और जल युक्ति से देवे। उसके साथ भाषणादि व्यवहार लेशमात्र भी कोई मनुष्य न करे कि जब तक उसका मरण न हो तब तक उसको इसी प्रकार रक्खे तो उसे मनुष्यपने का भी ज्ञान नहीं हो सकता! तथा जैसे बड़े वन में मनुष्यों को बिना उपदेश के यर्थाथ ज्ञान नहीं होता परन्तु पशुओं की नाईं उनकी प्रवृत्ति देखने में आती है वैसे ही वेदों के उपदेश के बिना भी सब मनुष्यों की प्रवृत्ति हो जाती, फिर ग्रन्थ रचने के सामर्थ्य की तो कथा ही क्या कहनी।

महर्षि दयानन्द की इस प्रत्यक्ष चुनौती से आंख मूंद कर जो लोग विकासवाद की बात करते हैं और ज्ञान का निर्माता मनुष्य को मानते हैं, यह कितना बड़ा दुराग्रह, अज्ञान एवं आत्म प्रवंचना है। यह तो हमें मानना होगा कि मनुष्य की उत्पत्ति से पहले सृष्टि बनी। बिना स्रष्टा के सृष्टि का बनना भी असंभव है और जिसने युक्तियुक्त सृष्टि की रचना की उसे रचने का ज्ञान भी अवश्य ही था। सृष्टि के पदार्थों को देखकर भी यदि हम कोई ज्ञान प्राप्त करते हैं तो उसका आदि ज्ञानदाता भी परमेश्वर ही माना जायेगा। मनुष्य का चिन्तन भी भाषा के बिना संभव नहीं। हम जब-जब सोचते हैं तो किसी न किसी भाषा में ही सोचते हैं इससे यह भी सिद्ध हुआ कि आदि भाषा का माध्यम भी वेद ही है, मनुष्य नहीं।

मनुष्य का स्वाभाविक ज्ञान साधन कोटि का है। जैसे मन के संयोग के बिना आँख से कुछ भी नहीं दीख पड़ता तथा आत्मा के संयोग के बिना मन से भी कुछ नहीं होता वैसे ही जो स्वाभाविक ज्ञान है सो वेद और विद्वानों की शिक्षा के ग्रहण करने में साधन मात्र ही है तथा पशुओं के समान व्यवहार का भी साधन है। परन्तु स्वाभाविक ज्ञान धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष विद्या का साधन स्वतन्त्रता से कभी नहीं हो सकता।

इससे महर्षि की यह मान्यता स्पष्ट हो जाती है कि वेद ही ज्ञान का आदि स्रोत है। सृष्टि के आदि में परमात्मा ने ही वेदों का प्रकाश किया।

यह प्रकाश किस तरह किया इसे भी महर्षि ने प्रस्तुत कर दिया है शतपथ ब्राह्मण कां ११। अ. ५। कण्डिका तीन का प्रमाण देकर—

"तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्ताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः।

महर्षि ने स्पष्ट लिखा है कि अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा चार देहधारी पुरुषों को क्रमशः सृष्टि के आदि में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद का प्रकाश किया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह प्रकाश इनके ज्ञान के बीच में किया। ये चार ऋषि मंत्रों के रचयिता नहीं अपितु प्रकट करने वाले वक्ता मात्र थे। इन वेदों का प्रकाशक तो स्वयं परमात्मा ही है। गायत्र्यादि छन्दों को रचना ईश्वर कृत ही है।

यहां यह भी प्रश्न उठता है कि वेद के मन्त्रों और सूक्तों पर जिन ऋषियों के नाम लिखे होते हैं उन्हें उस मन्त्र का कर्ता क्यों न माना जाए। इसके मानने में दोष आयेगा, क्योंकि इन ऋषियों के जन्म लेने से पहले ही से वेद का पठन-पाठन चला आ रहा है। देखो श्वेताश्वतर उपनिषद् में—

यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै०— आदि के प्रमाण से तथा मनुस्मृति के इन श्लोकों से—

अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्। दुदोह यज्ञ सिद्धयर्थं ऋग्यजुः साम लक्षणम् ॥

मनु अ. १ श्लो. २३

वैसे ही अध्याय २ श्लोक १५१ में देखिये—

तस्मै अध्यापयामास पितॄन् शिशुरांगिरसः कविः। इससे स्पष्ट है कि वेदों में अंकित ऋषियों से पूर्व भी वेद के अध्ययन का क्रम प्रारम्भ हो चुका था।

क्योंकि किसी देहधारी ने वेदों के बनाने वाले को साक्षात् कभी नहीं देखा। इस कारण से जाना गया कि वेद निराकार ईश्वर से ही उत्पन्न हुए हैं और उनको सुनते सुनाते ही आज पर्यन्त सब लोग चले आते हैं। तथा अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा इन चारों मनुष्यों को जैसे वादित्र बाजे को कोई बजावे या काठ की पुतली को चेष्टा करावे इसी प्रकार ईश्वर ने उनको निमित्त मात्र किया था। क्योंकि उनके ज्ञान से वेदों की उत्पत्ति नहीं हुई किन्तु वे निमित्त कारण भर ही रहे हैं।

यहां और एक बात स्पष्ट कर देना मैं आवश्यक समझती हूं कि आर्यसमाज में अनेक विद्वान् यह कहते सुने जाते हैं कि मुक्त आत्माओं को ही आदि सृष्टि में वेदों का ज्ञान मिलता है। यह बात सर्वथा निराधार और दोषपूर्ण है। हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि वेद का ज्ञान चार को ही दिया जाता है। यदि मुक्त आत्मा चार से कम या अधिक हों तो फिर एक प्रकार का संकट और पक्षपात का दोष प्रभु पर लग जावेगा। यहां संक्षेप में इतना ही जान लेना पर्याप्त है कि वेद का ज्ञान उन्हीं सर्वश्रेष्ठ चार आत्माओं को मिलता है जो पुण्यात्माओं में श्रेष्ठतम होते हैं। देखिए, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में महर्षि स्पष्ट लिखते हैं कि अब जानना चाहिए कि इन्हीं चार पुरुषों का ऐसा पूर्वपुण्य था कि उनके हृदय में वेदों का प्रकाश किया गया। महर्षि के इस स्पष्ट उल्लेख के बाद किसी प्रकार की शंका की कोई गुंजाइश ही नहीं रह जाती। आवश्यकता है कि हम ऋषि के केवल सत्यार्थ प्रकाश को ही नहीं अपितु उनके सारे ग्रन्थों को जिसमें उनके सूर्य के समान प्रकाशित वेद-भाष्य भी हैं आद्योपान्त मननपूर्वक पढ़ जाएं।

यहां यह भी प्रश्न उठता है कि क्या चारों ऋषियों को उच्चारणपूर्वक वेदमन्त्र बुलवाए? इसका एक उत्तर तो बाजे को बजा कर जैसे गायक सुर निकालता है उसी प्रकार कवि परमेश्वर ने उच्चारण भी करवाया। इस विषय को और अधिक स्पष्ट करते हुए महर्षि दयानन्द ने लखनऊ में लाला ब्रिजलाल साहब रईस के २६ प्रश्नों के उत्तर देते हुए स्पष्ट किया था कि जैसे कोई मनुष्य पित्त वा सन्ताप में आप ही आप बोलने लगता है उसी प्रकार उस भगवान् ने उन चारों के घट में और जिह्वा में प्रकाश करके कहा और उन्होंने उसकी शक्ति से विवश होकर कहा। इससे प्रकट है कि भगवान् ने वेद कहे हैं।

(देखिए दयानन्द शास्त्रार्थ संग्रह पृष्ठ ८१ और प्रश्न संख्या २४।)

इससे स्पष्ट होता है कि प्रभु ने चार ऋषियों के हृदय में वेद का प्रकाश किया। वेद शब्द से स्वामीजी ने केवल मंत्र संहिता भाग को ही स्वीकार किया है। ऋषि दयानन्द वेदों के अन्त में संयुक्त परिशिष्ट भाग को भी वेदान्तर्गत नहीं मानते। महर्षि कात्यायन ने ब्राह्मण ग्रन्थों का नाम भी वेद स्वीकारा है। उसका अभिप्राय ईश्वरीय ज्ञान वेद से न होकर केवल ज्ञानार्थक वह भी वेदानुमोदित रूप में ही लेना चाहिए। संसार में जितनी भी विद्याएँ हैं उनका मूल वेद में ही है। महर्षि ने अपनी ऋग्वेदादि-भाष्य भूमिका के वेद संज्ञा विचार में स्पष्ट कर दिया है कि मंत्र संहिताओं का वेद नाम इसलिए है कि वह ईश्वर-रचित और सब विद्याओं का मूल हैं।

इतना ही नहीं, महर्षि ने वेद में गणित शास्त्र, नौ-विमान शास्त्र, आकर्षण अनाकर्षण, तार विद्या आदि सप्रमाण सिद्ध की है। उनकी स्पष्ट घोषणा व मान्यता है कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है।

वेदों की उत्पत्ति के समय में महर्षि की मान्यता अत्यन्त यथार्थ, युक्तियुक्त और सर्वथा सत्य है। आपने उस संकल्प का आधार लेकर जिसे हर संस्कार आदि से पूर्व सनातनधर्मी ब्राह्मण भी दुहराते हैं, सिद्ध किया है कि वेदों को उतरन्न हुए एक अरब सतानवे करोड़ उनतीस लाख उनचास हजार छिहत्तर वर्ष हो चुके हैं। इसमें मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक ६८ से ७३ और ७९ और ८० का प्रमाण प्रस्तुत किया है। शास्त्रों के आधार पर कलि-युग चार लाख बत्तीस हजार वर्ष का होता है, कलियुग से दुगुना द्वापर, कलियुग से तिगुना त्रेता और चौगुना सतयुग

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होता है। इन चारों को मिला कर एक चतुर्युगी कहाती है। ऐसी इकहत्तर चतुर्युगियों का एक मनु या मन्वन्तर कहाता है और चौदह मन्वन्तरों का एक कल्प या एक ब्राह्म दिन कहाता है जिसे एक सृष्टि का काल कहते हैं या एक हजार चतुर्युगियों का एक ब्राह्म दिन।

लोकमान्य तिलक जैसे राष्ट्र पुरुषों ने वेद के काल को कुछ हजार वर्ष का माना है, पर स्वामी दयानन्द की काल गणना सप्रमाण और सर्वथा सत्य है। जिस प्रकार आज ईसवी सन् १९७६ का प्रमाण यही है कि यह गिनती परम्परागत चली आ रही है वैसे ही वैदिक विद्वान् संकल्प-सूत्र द्वारा—**श्री ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्द्धे वैवस्वते मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे अमुक संवत्सरायन ऋतु मास पक्ष दिन नक्षत्र लग्न मुहूर्ते अत्रेदं कृत्यं क्रियते।**

यह संकल्प वैदिक ब्राह्मण प्रत्येक संस्कार से पूर्व दोहराता है जिससे स्पष्ट है कि यह छठे मन्वन्तर का अट्ठाइसवां कलियुग चल रहा है। इस कलियुग के पाँच हजार पचहत्तर वर्ष हो गए हैं। इसी को हम मनुष्य की उत्पत्ति या पूर्ण सृष्टि का काल कह सकते हैं। सौभाग्य से अब आज के वैज्ञानिक भी सृष्टि की इस आयु को सत्य मानने लगे हैं।

इसी प्रकार स्वामी दयानन्द वेद मंत्रों के तीन-तीन प्रकार के अर्थ मानते हैं। एक आध्यात्मिक, दूसरा आधिभौतिक और तीसरा आधिदैविक। इस अर्थ की प्रक्रिया में ऋषि की स्पष्ट मान्यता है कि वेद के शब्दों का यौगिक प्रक्रिया से ही अर्थ किया जाना चाहिए। योग-रूढ़ि या रूढ़ि शब्दों का प्रयोग वेदों में सम्भव नहीं। उनके सम्पूर्ण अर्थ यौगिक ही किए जाने चाहिए जो निघण्टु और निरुक्तादि में वर्णित हैं।

वेदमंत्रों पर ऋषि और देवता का जो उल्लेख है वह मंत्र के विषय का बोध कराता है। जिस-जिस ऋषि ने जिस-जिस मन्त्र का प्रत्यक्ष किया उस-उस मन्त्र के साथ उस-उस ऋषि का बोध होता है। जिससे ऋषियों की ज्ञान की क्षमता और ऋषि परम्परा का इतिहास भी ज्ञात होता है। देवता से मन्त्र के विषय का बोध होता है। वेद ज्ञान का मुख्य प्रयोजन जहां सृष्टि विद्या का बोध कराना है वहाँ आत्मस्वरूप व प्रभु का ज्ञान कराना भी है। वेदों का प्रमुख लक्ष्य यही है। अतः महर्षि ने अपने वेद-भाष्य का मुख्य प्रयोजन आध्यात्मिक अर्थ द्वारा ईश्वर के स्वरूप का यथार्थ बोध कराना माना है। अन्य प्रकार के अर्थों का गौण रूप में प्रकाश किया है।

महर्षि दयानन्द वेद में तीन प्रकार की विद्या मानते हैं या वेद में तीन मुख्य विषय हैं और वे हैं—ज्ञान, कर्म और उपासना। सम्पूर्ण ऋग्वेद हमें सृष्टि के पदार्थों का और प्रभु के स्वरूप का ज्ञान कराता है, इसलिए ऋग्वेद ज्ञानकाण्ड का वेद है, यजुर्वेद कर्मकाण्ड का और साम उपासना काण्ड और अथर्व विज्ञान का। ज्ञान, कर्म और उपासना की दृष्टि से वेद तीन भी माने जाते हैं; इसी को वेदत्रयी कहते हैं। ज्ञानपूर्वक कर्म और श्रेष्ठ कर्म करते हुए ज्ञानपूर्वक उपासना करने से ही मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

वेद में तीन प्रकार के स्वर होते हैं। एक उदात्त, दूसरा अनुदात्त और तीसरा स्वरित। प्रत्येक वेद की उच्चारण की गति भी पृथक्-पृथक् है। ऋग्वेद के मंत्रों का उच्चारण द्रुत गति से होना चाहिए और यजुर्वेद का मध्यम गति से और सामवेद का विलम्बित गति से। अथर्ववेद में कुछ मन्त्र द्रुत विलम्बित गति से और अधिकतर द्रुत गति से बोले जाते हैं। स्वर भेद से अर्थ भेद हो सकता है। स्वर का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

महर्षि ने वेदमंत्रों की जो गणना की है वह इस प्रकार है।

ऋग्वेद की मन्त्र संख्या १०५८९ है। इसी प्रकार यजुर्वेद की मन्त्र संख्या १९७५, सामवेद की १८७३ तथा अथर्ववेद की ५९५७ है। वेद का प्रत्येक पद, शब्द एक विशिष्ट नियम और स्वर में बँधा है, जिससे उसमें किसी प्रकार का मिश्रण संभव नहीं और कोई उसे दोषपूर्ण छाप दे तो विद्वान् उसके दोष का परिशोधन वैदिक नियमों के आधार पर कर सकते हैं।

स्वामी दयानन्द वेद को ईश्वरीय ज्ञान होने से स्वतः प्रमाण मानते हैं और अन्य जितने भी ग्रन्थ हैं वे वेदोक्त होने से परतः प्रमाण माने जाते हैं। किसी भी ग्रन्थ में जो बात वेदानुकूल है वह ग्राह्य है और जो वेद विरुद्ध है वह त्याज्य है।

महर्षि दयानन्द की मान्यता के अनुसार वेद केवल हमारे धर्म ग्रन्थ ही नहीं हैं अपितु वे सम्पूर्ण ज्ञान और विद्या की पुस्तक हैं। इसलिए ऋषि ने स्पष्ट कर दिया कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है और उसका पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना परम धर्म है। इससे भी स्पष्ट है कि वेद ज्ञान का पुस्तक है और वेद में हमारा क्या धर्म है इसका भी विवेचन है इसलिए वेद को केवल धर्म पुस्तक कहना योग्य नहीं अपितु वेद ज्ञान की पुस्तक है।

और वेद जब ज्ञान की पुस्तक है तो वह मानव मात्र के लिए पठितव्य है और सभी स्त्री-पुरुष बिना भेद भाव के वेद का पठन पाठन करने का अधिकार रखते हैं।

वेद मंत्रों के अर्थ करने की एक विशिष्ट शास्त्रीय प्रक्रिया है जिसका विस्तार भय से मैं उल्लेख नहीं करती। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका जो सत्यार्थप्रकाश से भी अधिक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महत्त्वपूर्ण एवं ज्ञान का आगार है। उस ग्रन्थ को पढ़कर हम महर्षि की वेद सम्बन्धी मान्यताओं को भली भाँति समझ सकते हैं।

विस्तार भय से मैंने यहां संक्षेप में महर्षि की मान्यताओं पर प्रकाश डाला है। मैंने अपने इस लघु निबन्ध में उनकी वेद सम्बन्धी चौदह मान्यताओं का उल्लेख किया हैं। महर्षि दयानन्द की संपूर्ण मान्यताएं ज्ञान विज्ञान की कसौटी पर सत्य सिद्ध होती हैं जिन्हें कोई ज्ञान के आधार पर चुनौती नहीं दे सकता। मैं उन चौदह मान्यताओं को एक बार फिर संक्षेप में दुहरा देना चाहती हूँ।

१. वेद ईश्वरीय ज्ञान है।

२. वेद ज्ञान नित्य है।

३. वेद ही ज्ञान का आदिस्रोत है।

४. वेद हर सृष्टि के आदि में श्वासवत् प्रकट होते हैं और प्रलय में श्वासवत् प्रभु के सामर्थ्य में लीन रहते हैं।

५. सृष्टि के आदि में परम पुण्यात्माओं को वेद का ज्ञान मिलता है। उनके क्रमशः अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा उपाधि नाम होते हैं।

६. वेद में सब सत्य विद्याएं समाविष्ट हैं और वे मूल रूप मे या बीज रूप में हैं।

७. वेद चार ही हैं। परिशिष्ट वेद नहीं है और ब्राह्मण ग्रन्थों की परिगणना वेद में नही हो सकती।

८. प्रत्येक वेद का अपना एक विषय है—ज्ञान, कर्म और उपासना। ज्ञान का ही एक भेद है विज्ञान जो अथर्ववेद का प्रतिपाद्य विषय है।

९. वेद के शब्दों का अर्थ यौगिक प्रक्रिया से ही करना चाहिए।

१०. ऋषि मंत्रों के द्रष्टा होते हैं, स्रष्टा नहीं।

११. देवता मंत्र के विषय को कहते हैं।

१२. वेद को धर्म पुस्तक न कहकर ज्ञान का पुस्तक कहना पूर्ण सत्य है।

१३. वेद स्वतः प्रमाण है।

१४. वेदोत्पत्ति होकर एक अरब सत्तानवे करोड़ उनत्तीस लाख उनचास हजार पचहत्तर वर्ष हो चुके। छहत्तरवाँ वर्ष चल रहा है।

ये हैं महर्षि की वेद सम्बन्धी कुछ मान्यताएं। जिन मान्यातओं पर पृथक्-पृथक् रूप से एक-एक ग्रन्थ लिखा जा सकता है।

महर्षि ने अपनी दिव्य दृष्टि से जो यथार्थ स्वरूप हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है, अभी हम उसका वास्तविक मूल्यांकन नहीं कर पाए हैं। यह हमारे युग की क्षमता का दोष है। आगे आने वाले युगों में उत्तरोत्तर महर्षि दयानन्द का मूल्यांकन होगा और ऋषि का यश निरन्तर बढ़ता ही चला जायेगा। वे हमें एक ऐसा प्रकाश दे गए हैं जिस प्रकाश में हमें अपना जीवन पथ राजमार्ग की तरह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। काश, हम लोग ऋषि को पूरा पढ़ें या कम से कम ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका अवश्य पढ़ें। वह भूमिका अनमोल ज्ञानरत्न की मंजूषा है जो हमें हमारे मौलिक ज्ञान का बोध कराती है। आओ! आज हम सब मिल कर ऋषि की ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका और उनके द्वारा किए गए वेद भाष्य को पढ़ने का पवित्र संकल्प करें।

बन्दी से !

गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर

'बन्दी ! बता तो तू बन्धन में कैसे फंसा है ?'

'अपने कर्मों से' बन्दी ने जवाब दिया।

'कैसे ?'

'मैंने विचारा मैं संसार के प्रत्येक मनुष्य को धन और शक्ति उपलब्ध करने में मात दे सकता हूँ और अपनी तिजोरियां भरनी प्रारम्भ कर दीं। यहां तक कि राज्य कर भी दबा बैठा। निद्रा आई तो अपने स्वामी के बिस्तरे पर सो गया, धन और शक्ति के मद में और तो और स्वामी के अधिकारों को भी भुला बैठा। जब आंख खुली तो अपने को, धन और शक्ति के अपने बनाये कमरे में कैद पाया।'

'पर कैदी, तू जंजीरों में तो न जकड़ा था द्वार खोल कर बाहर आ जाता।'

'आह ! तुम्हें क्या मालूम ! मैंने स्वयं अपने को सुदृढ़ जंजीरों से जकड़ लिया था। मैंने समझा, इस धन और शक्ति की जंजीरों से मैं सारी दुनिया को बांध लूंगा और आप निर्विघ्न रूप से आजाद रहूँगा। इसलिये पसीना बहाकर परिश्रम के हथौड़ों से खून पसीना एक करके जीवन की अग्नि में तपा तपा कर मैंने धन राशि रूप जंजीर स्वयं तैयार की। जब मेरी मेहनत के परिश्रम-स्वरूप यह धन की जंजीर तैयार हुई तो मैंने क्या देखा कि जिनको काबू में रखने के लिये यह जंजीर बनाई थी वह तो खुले फिरते हैं आनन्द से। और अपनी बनाई हुई इस जजीर में मैं आप मजबूती से जकड़ा गया हूँ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

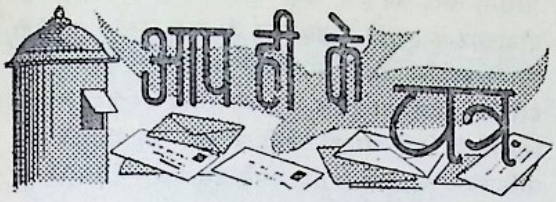

अखंडसौभाग्यशालिनी बहन !

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आपने जन-ज्ञान का साप्ताहिक प्रकाशन आरम्भ कर दिया है। सचमुच में आप जैसी देवी के दर्शनों से ही आत्मा को परम शांति मिलती है।

वह माता-पिता और कुल धन्य है, जिसमें आपने जन्म लिया।

हमारे भाई भारतेन्द्र नाथ जी का जीवन सफल है जो उन्होंने अपना सारा जीवन अनेक संघर्षों के होते हुए भी वेद प्रचार के लिए अर्पित किया हुआ है।

आपने जिस महान् कार्य का बीड़ा उठाया है, प्रभु आपको उसमें सफल करें, यह मेरी हार्दिक कामना है।

नागपुर —चन्द्रकान्ता विद्यालंकृता

× × ×

प्रिय बन्धुवर श्री भारतेन्द्र जी ! सप्रेम नमस्ते।

आपके अड़तालीसवें जन्म दिवस के अवसर पर आपको व राकेश जी को हार्दिक बधाई है। प्रभु आपको दीर्घ जीवन के साथ सुन्दर स्वास्थ्य भी प्रदान करें जिससे आप मानव समाज एवं आर्यसमाज की अधिकाधिक सेवा कर सकें। प्रभु आपको आपकी सत्य साधना में पूर्ण सफलता प्रदान करें। हमारी सपरिवार हार्दिक मंगल कामनायें इस पवित्र अवसर पर स्वीकार करें।

कानपुर —लक्ष्मणकुमार शास्त्री

× × ×

प्रिय भाई भारतेन्द्र जी, सप्रेम नमस्ते।

अकस्मात् 'जन-ज्ञान' साप्ताहिक मिला, जिसकी पहले कोई सूचना तक नहीं थी। शताब्दी समारोह में मिलने पर भी आपने कुछ नहीं बताया था। गुरुवर दयानन्द का सन्देश घर-घर पहुंचाने का यह नया प्रयास सफल हो। आपको, बहिन राकेश रानी तथा दयानन्द संस्थान को हार्दिक बधाई तथा शुभकामनाएं। साप्ताहिक के दस सदस्य बनाने का वचन देता हूँ। चार सदस्यों के चन्दे तो भिजवा भी दिए हैं। आपके लेखों की प्रेरणा से मलोट जैसी छोटी सी नगरी के २५ घरों में वेद भाष्य और ३०० घरों में सत्यार्थ प्रकाश तथा दयानन्द संस्थान का दूसरा साहित्य पहुंच चुका है। 'जन-ज्ञान' मासिक के आजीवन सदस्य के नाते आपके लेख पढ़ने से खून गर्म रहता है।

मलोट (पंजाब) —वेदप्रकाश आर्य

मान्यवर पंडिता जी,

समाचार यह है कि 'राधा स्वामी सम्प्रदाय' सारे देश में शीघ्रता से फैलता जा रहा है। आप सब आर्य-समाजी सस्थाओं को इसके खण्डन का निर्देश क्यों नहीं देतीं ? गुरुवर दयानन्द जी सरस्वती ने तो असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन करने का प्रचार किया था।

आज तक यह पता नहीं लगा कि ये उपासना किसकी करते हैं ? इनकी 'राधास्वामी सत्संग(व्यास)' की किताबें भी पढ़ीं। उनमें ज्यादातर अपने शिष्यों को गुरु उपासना के बारे में ही बताया गया है। तो क्या ये दुनिया के लोगों मे ईश्वर के रूप में अपनी पूजा करवाना चाहते हैं ? दुनिया को सर्वज्ञ ईश्वर की उपासना तथा सत्य को जानने का निर्देश क्यों नहीं देते ? वैसे कुछ अच्छी बातों का उपदेश ये देते हैं। अभक्ष्य भोजन न करना, मूर्ति पूजा न करना, सत्संग करना आदि। कृपया पत्र के द्वारा बतायें कि किस तरह से इनका खण्डन मुझे करना चाहिए, क्योंकि आप विद्वान् हैं।

शाहपुर —निरंजन कुमार

× × ×

अन्तर्भावना

हे 'भारतेन्द्र' तुम बन वामन,
तीन पगों में धरती नापो।
धरती पर तुम 'इन्द्र' धनुष सी
सतरंगी आभा छिटका दो॥
'जन ज्ञान' ज्ञान जन-जन का,
जन-जन में ज्ञान जगावे।
'वेद' दुन्दुभि दिग्दिगन्त में,
गूंजे, सबके ताप भगावे॥
मासिक, साप्ताहिक से बन दैनिक,
जन-जन का अज्ञान हटावे।
जन-जन के मन में प्रतिदिन,
'जन-ज्ञान' ज्ञान के भाव जगावे॥

हैदराबाद —वेदभूषण आर्य

कम से कम एक नया सदस्य
जन-ज्ञान (साप्ताहिक)
का बना कर कर्तव्य पालन करें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री भारतेन्द्रनाथ से मेरा परिचय

रामकृष्ण भारती

श्री भारतेन्द्र नाथ नामक व्यक्ति से मेरा परिचय लगभग पच्चीस वर्ष पुराना है। तब वे शायद 'आर्य' के सम्पादकीय विभाग में थे और मैं श्रीगंगानगर (राजस्थान) में डी० ए० वी० हाई स्कूल में मुख्याध्यापक के रूप में कार्य कर रहा था। उन दिनों मेरी कुछ रचनाएं साप्ताहिक आर्य में प्रकाशित हुईं। तभी से उनके साथ मेरा कुछ पत्र-व्यवहार आरम्भ हुआ।

सन् १९६७ की बात है। १२ नवम्बर को मेरा इक्यावनवां जन्म दिन, मिलन गोष्ठी के रूप में हमारे निवास पंजाबी बाग में मनाया गया। उस आयोजन के संयोजक थे बन्धुवर श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' तथा उस अवसर पर आने वाले महानुभावों में आचार्य श्री काका साहेब कालेलकर, श्री क्षितीश वेदालंकार तथा श्री भारतेन्द्रनाथ आदि थे। फिर यह परिचय दिन प्रतिदिन घनिष्ठ होता गया। एक बार जबलपुर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर तथा एक बार आर्यसमाज पंजाबी बाग के वार्षिकोत्सव पर उन्हें आमंत्रित करने का मुझे अवसर मिला। दोनों ही अवसरों पर उनसे सान्निध्य का अवसर प्राप्त हुआ तथा उनके भाषण, लेखनी तथा कर्मठता से प्रभावित हुआ। उनके यहाँ जाने का भी कई बार मुझे अवसर प्राप्त हुआ है और मैंने ऐसा अनुभव किया है कि वे आर्यसमाज तथा महर्षि दयानन्द के दीवाने हैं। वे कार्य में विश्वास रखते है। उनमें एक तड़प है क्रान्ति की, समाज को आगे ले जाने की। वे योजनाओं के धनी हैं और उन्हें कार्य रूप में परिणत करना भी जानते हैं। वे भावुक हैं और भावुकतावश वे कई बार ऐसे कार्य भी कर डालते हैं, जिन्हें दुःसाहस ही कहा जाएगा। यह श्रीमती राकेश जी की सतत साधना का परिणाम है कि वे आदर्श तथा कल्पना यथार्थ की धरती पर उतारने को विवश हुए हैं। श्री भारतेन्द्र की वाणी प्रभावशाली है। वे जनता को अपनी ओर मंत्र-मुग्ध कर लेने की शक्ति रखते हैं। वे मित्रों के मित्र तथा यारों के यार हैं। उन्हें अपने समस्त कार्यों में अपने परिवार के सदस्यों का पूर्ण सहयोग प्राप्त है; तभी वे अपने आप में एक संस्था बन गए हैं। श्री दयानन्द संस्थान तथा जन-ज्ञान प्रकाशन के द्वारा उन्होंने अमर शहीद लेखराम की अन्तिम इच्छा को पूर्ण करने का संकल्प लिया है। उन्हें अपने कार्यों में अनेक बाधाएं प्रस्तुत हुई हैं, पर उन्होंने सदैव मुस्करा कर उनका सामना किया है। वे एक सफल सम्पादक, लेखक, कवि, आलोचक, प्रचारक तथा प्रकाशक हैं। वे जागरूक मनीषी और चिन्तक हैं। घाट घाट का पानी उन्होंने पिया है। वे नेताओं के निर्माता तथा आलोचक हैं। वे स्वयं किसी नेता से कम नहीं है। अब तो वे नेता की अपेक्षा लाला तथा किसी मठ के मठाधीश-से लगने लगे हैं। उन्हें देख कर हमें दयानन्द मठ, दीनानगर के स्वामी स्वतंत्रानन्द जी तथा उनके सहयोगी स्वामी वेदानन्द जी का स्मरण हो आता है। उनका चित्र देखकर ऐसा लगता है कि वे शंकराचार्य परम्परा के एक आचार्य हैं, जिन्हें भारती जैसी विदुषी सहधर्मिणी का सान्निध्य प्राप्त हुआ है। वे मुझसे दस बारह वर्ष छोटे हैं, इसलिए यह सब कुछ लिखने का साहस कर सका हूँ। भगवान् करे कि हमें प्रति वर्ष उनका जन्म दिन मनाने का सुअवसर प्राप्त हो। इस शुभ अवसर पर मित्रों की ओर से हमारी शुभ कामनाएं उनके साथ हैं। वे स्वस्थ बने रहें, कर्मठ बने रहें तथा यारों के यार बने रहें, यही हार्दिक अभिलाषा है।

पं० श्रीमती राकेशरानी जी,

दिसम्बर १९७५ का जन-ज्ञान पढ़ा और जनवरी ७६ का भी—पढ़कर दुःख हुआ। आपस में द्वन्द्व-स्वार्थ टकराता है। गरीब पिसता है।

शताब्दी में माधव पौराणिक बुक डिपो को प्रधानता वह भी सार्वदेशिक सभा के सामने, बहुत लज्जास्पद है पर क्या किया जाए। अधिकार में अपना होश नहीं। दूसरों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। दूसरे धर्म वाले क्या सोचेंगे—पर अंत सबका है। आपके धैर्य की सराहना—परमात्मा ऐसे अवसर पर सुबुद्धि कायम रखे।

—धनीराम, जबलपुर

चीनी संस्कृति के सुखद दृश्य (?)

चाऊ एन-लाइ के हक में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। सो उनके सम्बन्ध में यह बात भी कहने दीजिये। एक बार उन्होंने देखा कि एक खास मामले में उनका एक सहकर्मी उनकी राह का रोड़ा बन गया है और घंटों से बहस कर रहा है; सो उन्होंने उसे अगली रात के भोजन के लिए अपने घर निमंत्रण दिया। दावत अप्रत्याशित रूप से शानदार रही; चाऊ बड़े विनोदी और मोहक थे उस रात और देर तक खाना-पीना चलता रहा। अंत में बहुत-बहुत धन्यवाद देकर जब अतिथि घर जाने के लिए उठा, तो चाऊ उसे फाटक तक पहुंचाने गये और वहां झुककर नमस्कार करते हुए बोले—'घर पर आपको बहुत सुखद दृश्य देखने को मिलें।' और अतिथि ने घर पहुंचकर बहुत 'सुखद दृश्य' देखे—उसके दो छोटे बच्चों के पेट फाड दिये गये थे और वे आंगन में पड़े हुए थे; बैठक में उसके भाई का मुर्दा छत से झूल रहा था, उसके दादा-दादी, दो पत्नियां, घर की नौकरानियां व नौकर अलग-अलग कमरों में अलग-अलग खौफनाक ढंग से मौत के शिकार हुए पड़े थे। परिष्कृत, विनोदी, अत्यंत मोहक चाऊ ने अपने सहकर्मी को इस तरह सबक सिखाया था।

('ओपीनियन' से)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

साप्ताहिक घटनाचक्र

(२७ मार्च से २ अप्रैल तक)

२७ मार्च—भारत द्वारा फरक्का बाँध से कम पानी लेने का निश्चय, ताकि बंगला देश को अधिक पानी मिल सके। कांग्रेस को राज्यसभा में दो-तिहाई बहुमत पुनः प्राप्त-द्विवार्षिक चुनाव के परिणामघोषित। उड़ीसा के चार संसद्सदस्यों और आठ विधायकों का भारतीयलोक-दल से त्यागपत्र। विख्यात चीनी विद्वान् लिन यू-तांग का देहान्त।

२८ मार्च—सब ओर से विदेशी खतरा बढ़ गया है—प्रधान मन्त्री की चेतावनी : जम्मू में भाषण। हरियाणा के स्वर्गीय राज्यपाल वीरेन्द्रनाथ चक्रवर्ती की अन्त्येष्टि।

२९ मार्च—संस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा विदेशी धन की स्वीकृति। खान अब्दुलगफ्फार खां पाकिस्तान छोड़ जाने को इच्छुक। जालन्धर पठानकोट सड़क पर दसूआ के समीप पंजाब रोड़वेज की बस दुर्घटनाग्रस्त। इकतीस व्यक्ति मरे। बस दिल्ली आ रही थी।

३० मार्च—भारत में बड़े पैमाने पर मलेरिया फैलने की आशंका। आपातकालीन स्थिति की घोषणा से देश में शान्ति का वातावरण : गृहमन्त्रालय की रिपोर्ट। बिहार के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री महामाप्रसाद सिंह रिहा। अर्जन्टीना के नये राष्ट्रपति जार्ज विडेला ने अपने पद की शपथ ग्रहण की।

३१ मार्च—श्री जगतसिंह मेहता विदेशमन्त्रालय के सचिव नियुक्त : श्री केवलसिंह सेवानिवृत्त। पश्चिमी देशों द्वारा पाकिस्तान को हस्तान्तरण के लिए तेल उत्पादक देशों को हथियार देने पर भारत चिन्तित : रक्षामन्त्रालय की रिपोर्ट। विदेश मन्त्री श्री यशवन्त राव चाह्वाण पांच दिन से सरकारी दौरे पर तुर्की को।

१ अप्रैल—आपातकालीन स्थिति से पहले वाली "खुली छूट" के दिन कभी न लौटेंगे : इन्दिरा जी की स्पष्टोक्ति : बी० बी० सी० से भेंट। तोड़ फोड़ करने वाले फरार राजनैतिक नेताओं को पकड़ने की पूरी कोशिश की जायेगी, उपगृहमन्त्री एफ०एच० मोहसिन की घोषणा। सुरक्षापरिषद् ने अगोला में दक्षिण अफ्रीका को आक्रान्ता ठहराया।

२ अप्रैल—हिन्दी ही देश की एकता बनाये रखने में समर्थ, राष्ट्रपति का मत, श्री अक्षयकुमार जैन को पत्रकारिता ग्रन्थ भेंट करते समय भाषण राज्यसभा के चार नये नामजद सदस्यों में श्री विश्वम्भरनाथ पाण्डे सम्मिलित युवक गरीबों की भलाई करें, इन्दिरा जी की अपील रुद्रपुर में भाषण।

वेदभाष्य का वितरण

अब केवल सूर्यनगर कार्यालय से ही हो रहा है। सारे रजिस्टर रिकार्ड वहीं है।

कृपया वहीं पत्र लिखें या सम्पर्क करें—

प्रबन्धक—वेद भाष्य कार्यालय, ३३७-ए० सूर्यनगर
P. O. चिकम्बरपुर दिल्ली-३२
फोन—२०१५८४

यह स्थान विवेक विहार के निकट है। दिल्ली गाजियाबाद चुंगी बार्डर से दक्षिण की ओर—

आर्य गुरुकुल एटा में आर्य विद्वानों का स्वागत

एटा (डाक से) आर्य गुरुकुल एटा के वार्षिकोत्सव पर आर्य विद्वानों का स्वागत समारोह स्वामी ब्रह्मानन्द जी की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्रनाथ जन-ज्ञान की संपादक पंडिता राकेश रानी, प० विशुद्धानन्द शास्त्री, पं० क्षितीश कुमार वेदालंकार प्रभृति विद्वानों का वेद मन्त्रों द्वारा गुरुकुल के योग्य आचार्य श्री ज्योति-स्वरूप जी ने तिलक लगाकर अभिनन्दन किया।

गुरुकुल आचार्य ज्योतिस्वरूप जी के तत्वावधान में सफलता पूर्वक वेद ज्ञान का प्रचार कर रहा है।

आगामी वर्ष सर्वत्र सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी मनाने का आवाहन

गाजियाबाद (डाक) से—आर्यसमाज स्थापना दिवस पर आयोजित विशाल जन सभा की अध्यक्षता करते हुए दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्रनाथ ने आर्य जनता को आवाहन किया १९७६-७७ में सत्यार्थप्रकाश शताब्दी धूम-धाम से मनायी जाए।

आप ने कहा कि अब बातों का नहीं काम समय है। प्रत्येक आर्य आगामी एक वर्ष में अधिक से अधिक सत्यार्थ प्रकाश वितरित करें। और १९७७ में आर्यसमाज स्थापना दिवस पर विशाल सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी समारोह राजधानी में मनाया जाए।

सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री रामगोपाल जी ने समारोह में भाषण देते हुए कहा कि आर्य समाज ने पिछले १०० वर्ष में देश को नया जीवन दिया है और भविष्य में भी राष्ट्र निर्माण में आर्यसमाज निर्णायक भूमिका अदा करेगा।

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के उपप्रधान श्री सच्चिदानन्द शास्त्री ने आर्यसमाज के गौरव पूर्ण सिद्धान्तों की चर्चा करते हुए कहा कि यह सिद्धान्त अकाट्य है और कोई भी बुद्धिमान इन से इन्कार नहीं कर सकता।

दार्शनिक विद्वान प्रो० रत्नसिंह ने अपने भाषण में कहा कि अब समय आ गया है जब हम ऋषि दयानन्द के दिव्य स्वप्नों को साकार करने का व्रत लें।

समारोह पूर्ण सफल रहा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

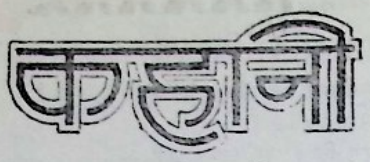

सुख की खोज

—आचार्य श्री जगदीशचन्द्र जी

० ० ० ०

एक दिन अन्यमनस्क हो सम्राट ने अपनी राजसभा से प्रश्न किया।

"सुख की प्राप्ति का उपाय क्या है ?"

सब अवाक् हो सम्राट का मुँह ताकने लगे।

प्रश्न साधारण था पर था विलक्षण। जीवन की अद्भुत, किन्तु सच्ची आकांक्षा उसमें झलक रही थी।

कुछ क्षण मौन रहने के बाद विलक्षण वृद्धि वृद्ध अमात्य ने कहा, "राज्यसभा में इस प्रश्न का वास्तविक उत्तर प्राप्त नहीं हो सकेगा।"

"क्यों ?" व्यग्र होकर सम्राट् ने पूछा।

"अधिकार परम्परा का निर्माण करने वाली यह राज्य सभाएँ" अमात्य ने उत्तर दिया "सुख-दुःख की बिना चिन्ता किए ही अपने दम्भ और महत्वाकांक्षाओं की कल्पना में ही तल्लीन रहती हैं।"

"तब ?"

"तब, श्रीमान् अधिकार और स्वार्थ दोनों से दूर की सृष्टि में बसने वाले किसी महान् विशेषज्ञ से ही इस प्रश्न का सन्तोषप्रद उत्तर प्राप्त होना सम्भव है।"

"वैसे विशेषज्ञ कहाँ रहते हैं अमात्य ?"

सम्राट ने आशंकित हृदय से पूछा।

"सुदूर किसी एकान्त स्थल में" अमात्य ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "संसार के कोलाहल से दूर।"

"मैं शीघ्र वहाँ जाना चाहता हूँ" सम्राट ने आदेश दिया। मन्त्री ने तत्क्षण स्वर्ण सज्जित एक सुन्दर रथ तैयार कराया। सम्राट् और मंत्री दोनों उस पर बैठकर संसार के कोलाहल से दूर सुख की खोज में निकल चले।

स्फटिक सी एक स्वच्छ शिला पर एक कृशकाय तपस्वी बैठे थे। उन्हें सम्राट् अभिवादन कर नीचे बैठ गये।

मन्त्री ने अवनत होकर कहा—"संसार के सर्वश्रेष्ठ पुरुष ! मेरा सम्राट् आज अविनाशी सुख की एकांत अभिलाषा में तुम्हारे निकट आया है।"

तपस्वी ने आश्चर्य की मुद्रा में कहा—"सम्राट ! क्या तेरे विशाल राजभवन में सुख नहीं है ?"

"हो सकता है श्रीमान्" सम्राट् ने उत्तर दिया "पर मैं नितांत सुख-विहीन हूँ।"

तपस्वी क्षण भर मौन रहकर हँस पड़े, बोले—"मैं भी सुखी नहीं हूँ।"

'सम्राट् उसी सुख की तलाश में जिसकी आज तुझे याद आई है मैं तेरी आकर्षक सृष्टि से बहुत दूर इस निर्जन प्रान्त में आ पड़ा हूँ।'

सम्राट हताश हो अमात्य का मुँह ताकने लगे।

मन्त्री ने हाथ जोड़कर कहा—"देव उसका उपाय ?"

"किसी सुखी पुरुष की तलाश करो" लापरवाही से तपस्वी ने उत्तर दिया।

"कहाँ मिलेगा ?" सम्राट् ने व्यग्र होकर कहा।

"इस विशाल सृष्टि में उसका अभाव नहीं।"

मन्त्री तत्काल बोल उठे—उन्हें पा लेने के बाद महाराज ?"

तपस्वी ने धीरे से मुस्कराकर कहा तब उनके दो वस्त्र ले लेना। एक मेरे लिए, एक अपने लिए।'

'क्या उसे पाकर सुखी हूँगा देव ?" सम्राट् ने आश्चर्य से कहा। "हाँ, हाँ अवश्य" तपस्वी ने दृढ़ता से कहा।

दूसरे दिन सुखी पुरुष की खोज के लिए अनेक पुरुष नियुक्त किये गए। ग्राम, नगर, जंगल सभी जगह राज-पुरुष दिन-रात एक सुखी पुरुष का अनुसंधान करने में लग पड़े।

दिन पर दिन और सप्ताह पर सप्ताह बीतने लगे। पर कोई सुखी पुरुष न मिल सका।

राजभवन में सम्राट् उदास भाव से बैठे रहते थे।

अमात्य ने एक दिन हाथ जोड़ कर कहा "सम्राट् !"

उल्लासित होकर सम्राट ने पूछा —"क्या मिला ?"

"अभी तक नहीं" अमात्य ने डरते-डरते कहा—'महान् आश्चर्य है सम्राट् इतने विस्तृत साम्राज्य में कोई भी सुखी नहीं।"

"तब ?"

"अनुसंधान हो रहा है सम्राट्?"

दूसरे दिन सम्राट् अमात्य के साथ शून्य हृदय से उपवन की ओर जा रहे थे। राजपुरुषों की एक भीड़ ने घेर कर कहा "सम्राट् हम सुखी को ढूंढने में समर्थ हुये हैं।'

"कहाँ है वह ?" सम्राट् ने व्यग्र होकर कहा।

"कुछ दूर नदी किनारे।"

सम्राट् शीघ्रता से उसी तरफ दौड़।

नदी किनारे संतप्त बालुकाराशि पर एक कृशकाय पुरुष अर्ध स्वगत भाव से लेटा हुआ मन ही मन कुछ गुनगुना रहा था।

सम्राट् चकित भाव से जाकर खड़े हो गए।

एक क्षण अद्भुत दृष्टि से सम्राट् की ओर देखकर वह हँस उठा और एक ओर को चल दिया।

सम्राट् ने व्यग्र होकर पुकारा 'ठहरो, संसार के सर्वश्रेष्ठ पुरुष कृपा कर मुझे अपने दो वस्त्र लेने दो।'

संसार का एकमात्र सुखी पुरुष बड़े जोर से हँसा, धीरे से बोला "मेरे पास एक भी वस्त्र नहीं है।"

सम्राट् निष्प्रभ होकर रह गए। सचमुच वह वस्त्र विहीन था। सम्राट् क्षण भर अचिन्तनीय भाव से खड़े रहे और फिर अपने सारे बहुमूल्य राजकीय वस्त्रों को नदी में फेंकने लगे।

जोर से हँसकर उन्होंने कहा—'ओह, आज मेरी खोज सफल हुई। मैंने सुख का मार्ग पा लिया है।'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—श्री वासुदेव

अमेरिका के अछूत

अमेरिका में नीग्रो जाति की संख्या आबादी की एक तृतीयांश है; किन्तु इस जाति को वहां वे मामूली अधिकार भी प्राप्त नहीं हैं जो पिछली शताब्दि में भारतीय अछूतों अथवा चांडालों तक को प्राप्त थे। श्वेतांग होटलों, छविग्रहों, अस्पतालों, नाट्यशालाओं, शिक्षणकेन्द्रों तथा सरकारी नौकरियों में अमेरिकन नीग्रो का प्रवेश निषिद्ध है। यद्यपि शासन अथवा कानून के अनुसार यह सामाजिक बहिष्कार (अत्याचार) अनुचित है तथापि व्यावहारिक जीवन में यह बहिष्कार कानूनी दृढ़ता से भी अधिक तत्परता से काम में लाया जाता है। अमेरिका की दक्षिणी रियासतों में तो उन्हें जीवित ही जलाने का नृशंस मनोरंजन गोरों का दैनिक कृत्य हो गया है।

अमेरिका की राजधानी के २,२०० होटलों में से २,१०० होटल सर्वश्वेतांग हैं। इन होटलों में नीग्रो नागरिक प्रवेश नहीं कर सकते। पिछले दिनों रेवरेण्ड डब्ल्यू० एस० जरनेगिन जो अब राष्ट्रीय चर्चों की सभा के सभापति तथा शासन के एक मन्त्री थे वाशिंगटन की १४वीं स्ट्रीट के कामसन काफेरिया में भोजनार्थ गये थे। उनके साथ जिनेवा ब्राउन नाम की एक नीग्रो महिला, जो उच्च सरकारी अफसर है, भी थी। दो अन्य व्यक्ति भी उस मंडली में थे। जरनेगिन ने अन्य ग्राहकों के समान थाली परोसकर खाना आरम्भ किया था कि होटल के मैनेजर ने उन्हें रोक दिया।

जरनेगिन ने प्रार्थना की, "कानून के अनुसार आप मुझे रोक नहीं सकते।"

"किन्तु होटल के व्यवस्थापकों की नीति के अनुसार नीग्रो ग्राहक यहां प्रवेश नहीं पा सकते" मैनेजर ने उत्तर दिया।

"तो आप मेरा बहिष्कार सिर्फ इसलिए कर रहे हैं कि मेरा चेहरा काला है ?" रेवेरेण्ड ने पूछा।

"जी हां," उत्तर मिला।

होटल के मालिकों ने अपनी नीति स्पष्ट करते हुए कहा, "कानून चाहे जो हो हमें अपने ग्राहकों की मर्जी के अनुसार काम करना पड़ता है। यदि नीग्रो इस होटल में आने लगे तो हमें अपना व्यापार बन्द कर देना पड़ेगा क्योंकि नीग्रो को देखकर हमारे श्वेतांग ग्राहक हमारा बहिष्कार कर देंगे।"

इस दलील और भावना का उत्तर क्या हो सकता है ? यद्यपि १८७२-७३ के कानून के अनुसार नीग्रो का बहिष्कार करना अपराध है किन्तु सार्वजनिक व्यवहार में वह कानून आज केवल एकमात्र "एक विस्मृत विधान" बन गया है।

जो दशा होटलों की है वही है छविघरों और नाट्यशालाओं की। वाशिंगटन के ६२ छविगृहों में से ४० में नीग्रो बिलकुल प्रवेश नहीं पा सकते, चार गृहों में सभी जा सकते हैं और शेष १२ गृह नीग्रो-दर्शकों के लिये ही निर्मित हैं।

वाशिंगटन के १४१ शिशु क्रीडांगनों में से १०५ में केवल श्वेतांग बालक ही प्रवेश पा सकते हैं। नीग्रो नहीं।

नगर के एकमात्र फ्रीमैन अस्पताल को छोड़कर शेष में नीग्रो की चिकित्सा नहीं हो सकती। पागलखानों और जेलखानों तक में यही वर्णभेद तत्परतापूर्वक निबाहा जाता है।

सार्वजनिक नौकरियों तक में इस वर्णभेद की महिमा है। वाशिंगटन के यातायात का संचालन कैपीटल ट्रांसपोर्ट नाम की संस्था द्वारा किया जाता है। इस संस्था द्वारा नियंत्रित बसों, मोटर-गाड़ियों के २,३०० आपरेटरों में एक भी नीग्रो नहीं है। संस्था के प्रेसीडेण्ट जे० ए० बी० ब्राडवाटर से जब इस सम्बन्ध में पूछा गया तो उन्होंने कहा, "यद्यपि संस्था का ऐसा एक भी नियम नहीं है जिसके द्वारा नीग्रो का बहिष्कार किया जाये तथापि नीग्रो कर्मचारी न रखने के लिए हम विवश हैं। हमने एक बार नीग्रो कर्मचारियों को नियुक्त करने का प्रयत्न भी किया था। किन्तु नतीजा क्या हुआ ?

१९४३ की ३ फरवरी को एक शिक्षित नीग्रो को संस्था की बस में नियुक्त किया गया था। यह खबर लगते ही श्वेत कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी। वे कई अपनी बसें प्रधार मार्गों पर रोककर घर चल दिये, परिणामस्वरूप सारे नगर का यातायात बन्द हो गया। अन्त में उसी दिन उस सिमन्स नाम के अभागे नीग्रो को नौकरी से निकाल दिया गया।

वाशिंगटन के आग बुझाने वाले सरकारी विभाग में जो कि अत्यन्त मानवीय विभाग है, वर्ण-भेद का अत्याचार प्रचलित है। भला आग बुझाने वाली साहसी, मानवीय और त्यागपूर्ण सेवा-भावना में काले-गोरे का क्या भेद हो सकता है ? किन्तु नगर की ४४ कम्पनियों में एक भी नीग्रो नियुक्त नहीं है। इस सम्बन्ध में विभाग के मुख्य अधिकारी मिलर्ड एच० सटन ने वर्णभेद को दूर करने का प्रयास भी किया था, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। 'मेरे हाथ बंधे हुये हैं,' उन्होंने अपनी विवशता को प्रकट करते हुये कहा था। उनके हाथ किसने बांधे और उन्हें निराश क्यों होना पड़ा; यह कोई गुप्तमंत्रणा की बात नहीं है। आग बुझाने वालों की यूनियन के अधिकारी वाल्डेमेयर ने इस सम्बन्ध में स्पष्टीकरण करते हुए घोषणा की है "वर्ण-भेद चाहते हैं हम कर्मचारी-गण। अग्नि बुझाने वालों को एक जगह रहना, खाना और सोना पड़ता है और वे कभी नीग्रो के साथ उठ-बैठ भी नहीं सकते !"

निवास-स्थानों में भी यह भेद मौजूद है। जिन मुहल्लों में श्वेतवर्ण का निवास है वहां नीग्रोगण नहीं रह

(शेष पृष्ठ ३० पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—कैलाश सत्यार्थी

आवाहान

उठो !
ऊषा की आभा का अवतरण करेंगे हम.
प्राची की लालिमा को जन-मन में बखेरेंगे ।
चलो ! हम धरा पर नया सूरज उगाएंगे ।
हमको भुलावा देकर हमारे ही घर के लोग ।
कोयला इकट्ठा कर दहकते रहे अंगारे—
और प्यारी वसुधा पर सतत बिखेरते रहे ।
महकते गुलाबों की हर कली मुरझा गई,
चहकते विहंगों का हर पर झुलस गया ।
और सूरज ? बेचारा !!
काली घटाओं के झुंड में छुपता गया ।

आओ !
अब मिलकर
कुछ, छोटे—कुछ एकदम मोटे से—
कुछ, खुद बचते—कुछ को गिराते से—
विषमता की व्यवस्था के बादलों को ध्वंस कर—
हमारे सूरज को हम सुरक्षित निकालेंगे ।
हमारी ही मिट्टी में बोकर फिर उसे हम
स्नेह और ममता की हवा के झोंकों में
श्रम से सहेजेंगे—और शोणित से सींचेंगे
तब एक नहीं—सौ-सौ,
हम सूरज उगाएंगे
चलो—
हमारी धरा पर हम सूरज उगाएंगे ।

आगे और पीछे

सेठ शंभुनाथ नगर के बहुत ही प्रतिष्ठित नागरिक थे । वे अपने बैंक के सर्वेसर्वा, रामलीला कमेटी के सभापति और म्युनिस्पल बोर्ड के चेयरमैन थे ।

उनकी पत्नी का उस दिन देहांत हो गया, तो सारे शहर में जैसे शोक छा गया और कोई दस हजार आदमी श्मशान-यात्रा में सम्मिलित हुये ।

सब ने कहा—कितना मान करते हैं लोग सेठ शंभुनाथ का !

उस दिन अचानक सेठ शंभुनाथ का हार्टफेल हो गया । उनके मित्रों में शोक छा गया और कोई पांच सौ आदमी उनकी श्मशान-यात्रा में साथ गये ।

शेष लोग इस चर्चा में व्यस्त थे कि अब चेयरमैन कौन हो ?

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

"मेरी डायरी का एक पन्ना"

★ कहीं पढ़ा—प्रत्येक को अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए ।

★ एक दिन मैं भी 'स्व' की परिधि को तोड़ कर 'पर' की असीमता में प्रवेश करने का उपक्रम करने लगा ।

★ मेरी नहीं—सबकी उन्नति के लिए, मेरा नहीं—सबका, कुछ करने उद्यत हुआ ।

★ किन्तु बाहर खड़े—लोगों ने चेतावनी दी—'यह हमारी मान्यताओं और परम्पराओं से पृथक् तो नहीं ?'

★ थोड़ा विचलित सा हुआ मैं—मेरे पास लौट आया ।

★ मन बुदबुदाया—'करें या न करें ?'

★ आत्महीनता ने कहा—'लोग क्या कहेंगे ?'

★ बुद्धि बोली—'क्या यह लाभप्रद है ?'

★ अहंकार कैसे पीछे रहता—पूछा—'क्या इसमें लोकप्रियता निहित है ?'

★ भय भी चुप न रहा—'तुम सुरक्षित तो रहोगे ?'

★ आलस्य आगे आया, बोला—'परिश्रम तो नहीं करना पड़ेगा ?'

★ स्वार्थ ने पूछा—'लोगों ने तुम्हारे साथ क्या किया है ?'

★ क्रोध भी अन्ततः भड़क ही उठा—'भाड़ में जाए दुनियाँ—क्या तुम ही सबके ठेकेदार हो ?'

★ तब मुझे लगा—ये सब मेरे—मेरे अपने नहीं हैं ।

★ और तभी मेरे—बहुत—बहुत—भीतर से कोई आवाज आई—प्रश्न वाचक नहीं आदेश वाचक—'यह तुम्हे करना है—सत्य के मार्ग पर चलते हुए ।'

★ शायद यही हमारे—तुम्हारे—सबके अंतरम में छुपे परमपिता प्रभु की ही प्रेरणा है ।

★ मैं उसका पालन कर रहा हूँ—

★ और लोग मुझे पागल कहे जा रहे हैं ।

★ तुम्हारे साथ भी तो ऐसा ही कुछ होता हैं ।

(पृष्ठ २९ का शेष)

सकते । कभी-कभी किसी मुहल्ले के एक फ्लैट में किसी कारण से नीग्रो का निवास होने से उस मुहल्ले की पूरी श्वेत आबादी खाली हो जाती है ।

वर्तमान के शासन के अंतर्गत अब यदा-कदा इस वर्ण-भेद नीति में कुछ सुधार हुआ है किन्तु समस्या का समाधान अब भी योजनों दूर है । कभी तो वर्ण-भेद सरीखे अत्याचार के विरोधियों को साम्यवादियों की संज्ञा देकर बदनाम तक कर दिया जाता है । मानों ऐसा कोई भी सुधार अथवा मानवतावादी कर्म जिसे अमेरिका के श्वेतांग प्रभु पसन्द नहीं करते साम्यवाद है और उसके प्रणेता हैं साम्यवादी ? साम्यवाद से बड़ा पाप अमेरिका में है ही और कौनसा ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(पृष्ठ १२ का शेष)

आर्यसमाज दास बैरुख, कप्तान बोयती, हंसू, और आर्य-प्रान्तिक सभा में कार्यक्रम रखे गये। दास बैरुख में लगभग तीन मास तक मास में दो बार साप्ताहिक सत्संगों में भी मेरे व्याख्यान होते रहे थे। तीन दिन की व्याख्यान माला में एक व्याख्यान 'ईश्वर की सिद्धि और उसकी प्राप्ति के उपाय' विषय पर दिया गया। एक घण्टे तक एक ही मन्त्र की विस्तृत व्याख्या सुनकर लोग मुग्ध हो गये। दूसरे दिन 'ओम् का महत्त्व' विषय पर व्याख्यान हुआ। पण्डित मल्हू जी ने कहा—आज सचमुच आनन्द आ गया। प्रान्तिक सभा में दोनों व्याख्यान वहां के अधिकारियों की इच्छानुसार यज्ञ के विषय में हुए जिसमें प्रत्येक मन्त्र के साथ ओम् क्यों नहीं लगाना चाहिए, मौन आहुतियां क्यों हैं, आठ-आठ अंगुल की तीन समिधाएं क्यों ? इत्यादि यज्ञ सम्बन्धी सभी शंकाओं का समाधान किया गया।

एक रविवार को सरमक्का के एक अन्य मन्दिर में भी एक व्याख्यान का आयोजन किया गया। यह मन्दिर श्री लक्ष्मीप्रसाद जी मल्हू के दान, प्रयत्न और पुरुषार्थ का फल है। यह मन्दिर आर्यप्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत है।

अन्तिम तीन दिन का कार्यक्रम पुनः आर्य दिवाकर महासभा में रखा गया। इस बार विषय रखा गया 'सत्यार्थप्रकाश।' पहले दिन नवें समुल्लास के आधार पर मैंने "मुक्ति, उसका स्वरूप और मुक्ति के साधन" विषय पर व्याख्यान दिया। यह व्याख्यान राधिका रेडियो द्वारा प्रसारित किया गया। अन्य दो व्याख्यान सप्तम समुल्लास के आधार पर ईश्वर और वेद के सम्बन्ध में हुए।

इस बार एक विशेष बात यह रही कि कोका कोला के स्थान पर शरबत पिलाया गया और यह इस लिए कि स्वामी जी कोकाकोला का खण्डन करते हैं।

शनिवार को भाव भीनी विदाई दी गई। (क्रमशः)

(पृष्ठ १४ का शेष)

से रोक सके। तभी तो उसका धर्मपत्नी नाम सार्थक होगा।

सुशीला—बहिन जी ! नारी को घर की रानी भी तो कहते हैं।

रामेश्वरी—क्योंकि घर के सारे शासन की बागडोर उसी के हाथ में होती है।

रमा—मैं एक अद्भुत बात बताऊंगी।

रामेश्वरी—वह क्या ?

रमा—नारी शब्द को उलट कर उसकी ई की मात्रा वही रहे तो रानी शब्द बन जाता है।

सुशीला—कितनी शरारती है यह। (सब हंसती है)

रामेश्वरी—पर बात बड़ी पते की कही इसने। अच्छा, तो अब आप भली प्रकार समझ गई होंगी कि मनु भगवान् ने इस श्लोक में नारी जाति को इतना ऊंचा स्थान क्यों दिया है। (घंटी की आवाज आती है।) यह लो घंटी भी बज गई।

प्रेरणाप्रद वचन

मानव को चाहिए कि वह प्रतिदिन आत्म-निरीक्षण करे। रात्रि में सोते समय सर्वप्रथम प्रभु का ध्यान करे। तदुपरान्त अपने दिन भर के क्रिया-कलाप पर दृष्टिपात कर यह जाने कि आज उसने दिन भर में कौन-कौन से कार्य पशु के तुल्य, कितने राक्षस के समान, कितने सामान्य मानव के तुल्य और कितने आदर्श व्यक्ति के समान किए हैं। इस प्रकार वह अपनी त्रुटियों को सुधार कर श्रेष्ठ एवं उत्तम जीवन की राह पर बढ़ सकता है।

× × ×

जो स्वयं उठने का प्रयत्न करता है, उसे ही दूसरों का सहयोग भी प्राप्त होता है। जो केवल आलस के वशीभूत होकर उठने का ही प्रयास नहीं करता उसका सभी साथ छोड़ जाते हैं।

× × ×

यदि आप कोई बात गुप्त रखना चाहते हैं तो उसे दूसरों पर कदापि प्रकट न करें। क्योंकि नीति का वचन है कि ६ कानों में पड़ी बात कभी भी नहीं छुप सकती; वह प्रकट हो ही जाती है।

× × ×

परमात्मा ने मनुष्य को उन्नति करने के लिए दो शक्तियां प्रदान की हैं, एक है शारीरिक एवं दूसरी है मानसिक। इनमें से शारीरिक शक्ति की अपेक्षा मानसिक शक्ति ही अधिक महत्त्वपूर्ण है।

× × ×

यह पूर्णतः सत्य है कि जब किसी के विनाश की घड़ी निकट आती है तो उसका विवेक अर्थात् सोचने समझने की शक्ति स्वतः नष्ट हो जाती है। उस स्थिति में उसकी बुद्धि भी विपरीत आचरण करती है।

× × ×

परिग्रह नहीं, अपरिग्रह ही सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने का धर्मसम्मत पावन पथ है।

सत्यार्थ प्रकाश : २००) सैकड़ा
स्वामी जी का जीवन : १००) सैकड़ा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऐतिहासिक कहानी—

—श्री चन्द्रभूषण सिंह

उपलों की दीवार

●●●●

दिन भर की लगातार गोलाबारी के बावजूद किले की दीवार टस से मस नहीं हुई। तोपखाने के न जाने कितने तोपची मौत के घाट उतर चुके थे। जो बाकी थे उनकी हिम्मत जवाब दे चुकी थी, जिस समय घोर गर्जना के साथ तोपें मुंह से आग उगलतीं तो यही जान पड़ता था कि किले की पंचगजी दीवार अब उड़ी और तब उड़ी और वह समय अति निकट है जबकि दुर्ग में बन्द होकर लड़ने वाले मुट्ठी भर जवानों का जीवन विजेताओं की दया पर निर्भर रह जायेगा। परन्तु किले से होने वाले जवाबी हमले दूसरे ही क्षण इसका प्रतिवाद कर देते थे और अधिकांश सैनिक कह उठते थे कि विजय का स्वप्न देखना भारी मूर्खता नहीं तो और क्या है।

मुगल तोपची मुराद खां ने अपने प्रधान सेनापति से कहा, 'जनाब तीरों की बौछार और गोलियों की मार से हमारे जवानों की नाक में दम हैं। किले की बुनियाद तक पहुंच कर हमें मजबूरन वापस आना पड़ता है। आज हम लगातार अठारह घण्टे से गोले बरसा रहे हैं। मगर कामयाबी की कोई सूरत नजर नहीं आ रही है। हमें तो ऐसा जान पड़ता है कि रानी दुर्गावती के सरदारों ने किले की दीवारों पर जादू कर दिया है।

प्रधान सेनापति अब्दुल मजीद आसफ खां ने उचक कर घोड़े की पीठ पर बैठते हुये उत्तर दिया, 'बात तो कुछ ऐसी ही जान पड़ती है मुराद! मैं खुद मौके पर चलकर देखता हूँ। तुम जरा सिपहसालार फुगानी को मेरे पास भेज दो।'

प्रधान सेनापति आसफ खां अभी मोर्चे तक पहुँच भी न पाया था कि एक बड़े जोर का धमाका हुआ और 'अल्ला हो अकबर' की गगन-भेदी गर्जना के साथ किले की दीवार हवा में उड़ती हुई दिखलाई पड़ी।

मुराद खां तोपची दूर ही से चिल्लाया, 'अल्लाहो अकबर! खुदा का शुक्र है कि हमारी मेहनत ठिकाने लगी। अब हम जहाँपनाह के सामने सिर ऊंचा करके चल सकेंगे।'

आसफ खां ने दूर ही से टूटी हुई दीवार को ध्यान से देखते हुये कहा, 'यह सब कुछ आप लोगों की मुस्तैदी का नतीजा है। खुदा का लाख लाख शुक्र है, हाँ एक जरूरी बात यह बतानी है कि अभी हम किले में दाखिल न होंगे क्योंकि ऐसा करना मसलहत के खिलाफ है। शाम हो गयी है दुश्मन घात में होगा। रानी के साथ दगा करने वाला राव गिरधारी तो यही चाहता है कि हम चटपट किले में घुस जायें। मगर मैं तुम से साफ-साफ कह देना चाहता हूँ कि किले में मेरे न घुसने की सबसे बड़ी वजह राव का ऐसा चाहना ही है। रानी को अपने फरेब में फंसाने वाला राव गिरधारी भला कब चाहेगा कि मैं उसके रास्ते का कांटा बन कर रहूँ।'

एक नौजवान सैनिक ने जो पास ही खड़ा था हाथ जोड़कर अर्ज की 'हुजूर एक नहीं, एक हजार गिरधारी भी अब हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। मौत भी हमारे सामने आएगी तो हम तलवार से उसके दो टुकड़े कर देंगे! आप हुक्म दें कि हम अल्लाहो-अकबर के नारे लगाते हुए किले में घुसें।'

'हरगिज नहीं।' आसफ खां ने कहा, 'रात भर आराम करने के बाद हम तड़के किले में दाखिल होंगे। हाँ, इस बात का पूरा ख्याल रहना चाहिए कि कहीं हमारी गफलत से रानी दुर्गावती अपने मुट्ठी भर ? फरोशों को लेकर किले से बाहर न निकल जाये, किले के चारों तरफ सख्त पहरा रहेगा। बारी-बारी से लोग आराम करेंगे। किसी किस्म की कोताही करने वाले को मौत का मजा चखना पड़ेगा याद रहे।'

(२)

सारी रात मुगल सेना विश्राम करती रही। महीनों के बाद उसे सुख की नींद सोना नसीब हुआ था। रात की निस्तब्धता में 'खटपट' से कुछ सैनिकों की नींद उचटी अवश्य, परन्तु उन्होंने उसे निद्रित अवस्था का भ्रम या अपने ही पहरेदारों की आवाज समझकर अपने बगल के सैनिकों को सचेत रहने की चेतावनी देना ही यथेष्ठ समझा। उन सबको इस बात का पूरा विश्वास हो गया था कि दुर्ग के बचे-खुचे, थके-थकाए सैनिक अपने से पाँच सौ गुनी टिड्डीदल जैसी विशाल मुगल सेना पर छापा मारने की हिम्मत नहीं कर सकते। किसको अपनी जान सस्ती पड़ी है जो सोते सिंह को जगा कर अपनी जान जोखिम में डालेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(३)

सुबह की अजान के साथ ही मुगल सेना अगड़ाई लेकर उठ बैठी और सबसे पहिले जिस चीज पर लोगों की निगाह गयी, वह किले की वही दीवार थी जिसको तोड़ने में सहस्रों जानें गयी थीं और पूरे अठ्ठारह घण्टे तक मुगल तोपों ने अग्नि वर्षा की थी। अब देखते क्या हैं कि वही दीवार हू-बहू अपनी जगह पर मौजूद है। लोगों ने अपनी आँखों को एक दो बार नहीं, बीसों बार मल मल कर देखा कि वह स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं वरन् जागृत अवस्था में हैं और अपनी आँखों से देख रहे हैं कि दुर्ग की दीवार की मरम्मत रातों रात निर्विघ्न रूप से समाप्त हो चुकी है।

यह बात कोई ऐसी-वैसी न थी। सभी मुगल सेनापति, राव गिरधारी समेत प्रधान सेनापति आसफ खाँ के डेरे में सलाह-मशविरे के लिये हाजिर हुए। आसफ खाँ स्वयम् बड़ी चिन्ता में था। कुछ देर के लिए तो उसने यही समझ कर सन्तोष कर लिया था कि किले की दीवार उसके सामने की ओर से नहीं बल्कि दूसरी ओर से उड़ाई गयी है। परन्तु राव गिरधारी समेत तीनों सेनापतियों को आते देख कर वह विषय की गम्भीरता को तुरन्त ताड़ गया। राव गिरधारी से किसकी दीवार उड़ने के बाद आसफ खां के नजदीक अब कोई आवश्यकता बाकी नहीं रह गयी थी, उसने बड़े अदब से कहा, 'राव साहब, इसमें शक नहीं कि जनाब ही की राय पर अमल करके हमने कामयाबी हासिल की है मगर कल की गफलत ने हमारे अरमान खाक में मिला दिये। वह देखिये कई हजार आदमियों की जान गवां कर डेढ़ दिन की लगातार गोलाबारी से जिस दीवार को कल हमने उड़ाया था वह पांच ही छः घण्टे में अपनी जगह पर ज्यों की त्यों मौजूद है। आखिर यह कैसा तिलिस्म है, राव साहब जिसमें हम आज चार माह से उलझे हुए हैं?'

राव गिरधारी ने मूछों पर हाथ फेरते हुए कहा, खां साहब! आप इस गढ़ी की एक मामूली सी चुहिया से इतना परेशान हो रहे हैं। अभी मैं अपने मुखबिरों को भेज कर असलियत का पता लगवाये लेता हूं। आप की सुस्ती देखकर आज मैंने एक नयी चाल चली है। रानी के नये सिपाहियों में मैंने यह कहकर फूट डलवा दी है कि मुफ्त में जान गंवाने से उनका कोई फायदा नहीं है क्योंकि रानी की हार तो पूरे तौर पर निश्चित ही है चाहे वह दो महीने में हो, परन्तु होगी अवश्य। दूसरी तरफ मुगलों की तरफ से लड़ना एक दम अपनी मदद करने के बराबर है क्योंकि मुगलों की जीत के बाद गोंडवाना-निवासी राव गिरधारी सिंह ही तो उनका राजा होगा। आज आप देखेंगे कि नई भर्ती के सिपाही या तो हमारी तरफ से लड़ेंगे या फिर हाथ पर हाथ धरे तमाशा ही देखते नज़र आयेंगे। बस अब आपको कुछ भी नहीं करना है, छोड़िए तोप-गोले और बारूद को।'

सवेरा हो गया। भगवान् भास्कर गोंडवाना निवासियों की वीरता के प्रमाण, किले की मरम्मत की हुई दीवार को देखने के लिये बड़ी सज-धज के साथ निकले। 'हरहर महादेव' और जय बजरङ्ग' के गगन भेदी नारों ने आसमान सिर पर उठा लिया। आसफ खां राव गिरधारी और अन्य सेनापतियों ने देखा कि न तो किले की दीवार उड़ाने की आवश्कता रह गयी है और न तोपें दागने की, बल्कि वह रानी दुर्गावती, जिसके लिये सब कुछ होने जा

भारतीय वीराँगनाएं किस प्रकार शौर्य की अप्रतिम मूर्ति सी स्वाभिमान की रक्षा के लिए जूझती रही हैं, यह इस कहानी के प्रत्येक शब्द में टपक रहा है। नारी के साहस शौर्य और तेज की प्रेरक यह गाथा सभी के मानस में ऐसा ही बनने को चाह पैदा कर दे, यही तो हम चाह रहे हैं।

—सम्पादक

रहा है, पांचों हथियार धारण किये साक्षात् रण चण्डी बनी हुई, हाथी पर सवार चली आ रही है। इससे पहले कि लोग कुछ समझ सकें, वह अपने हाथ के करतब दिखाने लगी। दूसरी ओर उसका एक मात्र पुत्र राज्य का उत्तराधिकारी वीर नारायण बहादुर दुश्मन के दिलों पर अपनी बहादुरी का सिक्का जमाने लगा। तीन बार उसने अपनी से बीस-बीस गुनी मुगलों की सुसज्जित सेना को पीछे ढकेल दिया। मुगलों के पैर उखड़ने लगे और वह सर पर पैर रखकर मैदान से भागने ही वाले थे कि गोंडवाना के भाग्य का निपटारा करने वाला तीर वीर नारायण बहादुर की छाती में लगा और वह अचेत हो गया।

रानी दुर्गावती ने आंसू पीकर दूर ही से कहा—'बेटा तूने मेरे दूध को सफल किया।' चुने हुए सैनिकों के एक दल को वीर नारायण बहादुर के साथ तुरन्त चौरागढ़ जाने की आज्ञा मिली।

परन्तु इस उलट-फेर का परिणाम बड़ा भयानक हुआ। गोंडवाना निवासियों के पाँव उखड़ गये, रानी ने जब यह दशा देखी तो मातृभूमि की वेदना से तड़प कर क्रुद्ध शेरनी की भांति शत्रुदल पर टूट पड़ी। उसका हाथी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भारी भरकम जंजीरों से जकड़ दिया गया और लड़ाई बन्दूक और तीरों की जगह तलवारों और बल्लों से होने लगी उस समय दिव्य ज्योति सा रानी का चेहरा दमक रहा था। माथे पर लाल चन्दन, तन पर केसरिया साड़ी और हाथ में नंगी तलवार धारण किये वह ललकार-ललकार कर रण क्षेत्र से शत्रु को भगाने का भागीरथ प्रयत्न कर रही थी वह मुगलों को इस बात की चुनौती सी दे रही थी कि मैं लाख अबला हूं सही, परन्तु दम में दम रहते अकबर तो क्या दुनियां में किसी की भी मजाल नहीं कि वह मेरे पति द्वारा सौंपी गयी पवित्र भूमि को मुझसे छीन सके। उसी हाथी पर पीछे बैठा हुआ रानी का विश्वास पात्र मन्त्री आधार मानो कह रहा था कि गोंडवाना में जहां राव गिरधारी जैसे लोग मौजूद हैं वहीं अधार ऐसे क्षुद्र सेवक भी हैं।

और उन सबसे अलग रानी के दो विश्वास पात्र सेनापति शम्स खां मियाना और मुबारक खां तूग तलवार चलाकर कह रहे थे कि अन्याय हर हालत में अन्याय ही है चाहे वह स्वयं महाबली अकबर करे या सिपहसालार आसफ खां द्वारा कराये, जब तक हमारे हाथों में ताकत है हम गोंडवाना की पाक जमीन पर अधर्म का डंका कदापि न बजने देंगे।

उधर मुगलों को भली भांति मालूम था कि रानी दुर्गावती के पास केवल इने गिने सरदार और सिपाही बच गये हैं। छिन्न-भिन्न सैनिकों को लेकर अपने से पांच सौ गुनी ताकत का सामना आखिर वह कब तक करेगी। बकरे की मां कब तक खैर मनायेगी ?

आसफ खां का यह सोचना बिलकुल सच निकला। भाग्य सदैव सबल विजेताओं का ही साथ देता है। कमजोर पर तो उसे भूल कर भी दया नहीं आती। पाप के बोझ से अन्याय ही का पलड़ा सदैव भारी दिखाई पड़ता है। न्याय तो हल्का अपमानित होकर जगह-जगह की ठोंकरें खाता फिरता है।

ठीक उस समय जबकि रानी अपने प्रलयंकारी आक्रमणों से शत्रु के दांत खट्टे कर रही थी किसी ने घात की जगह से एक विषैला तीर साध कर चलाया जो उसकी कनपटी में समा गया। रानी ने बिना किसी घबड़ाहट के उसे अपने ही हाथों से खींच तो लिया परन्तु तीर की गाँसी अन्दर ही रह गयी। मरहम-पट्टी का समय बिलकुल ही न था। एक-एक पल एक-एक युग के समान बीत बीत रहा था। घायल शेरनी की तरह क्रुद्ध होकर वह आसफ खां पर झपटना ही चाहती थी कि उसकी इस धीरता के उत्तर में एक दूसरे सनसनाते हुए तीर ने आकर के उसकी गर्दन छेद दी।

क्षण ही भर में जब रानी दुर्गावती को होश आया तो अपने मुट्ठी भर जवानों को उत्तेजित करते हुए उसने मन्त्री अधार से कहा अब देखने का समय बिल्कुल नहीं है। इसके पहले कि शत्रु के अपवित्र हाथ मेरे शरीर पर लगें, तू यह कटार ले और इसे मेरे कलेजे के पार उतार दे।"

अधार ने अबोध बालक की भाँति बिलखकर रोते हुये कहा "जिसका नमक कई पीढ़ियों से खाता चला आ रहा हूं उस पर इन हाथों के उठने के पहिले ही मुझ पर वज्र क्यों न टूट पड़ा ?"

रानी ने डपट कर कहा 'नादान तूने मेरा मतलब बिल्कुल ही नहीं समझा। मैं सहन नहीं कर सकती कि मेरे जीते जी शत्रु मेरे पति द्वारा सौंपे गये हमारी मातृ भूमि पर अधिकार करे या मेरे शरीर को हाथ लगाये। खैर अब बहस का समय बिल्कुल ही नहीं है।'

इतना कह कर उसने अपनी चमकती हुई कटार ली और देखते-देखते उसे स्वयं अपने कलेजे के पार उतार ली।

गोंडवाना फतह हो गया। कहते हैं कि इस विजय रूपी कलंक का टीका अपने माथे पर लगाकर जब आसफ खां ने किले में प्रवेश किया तो तहखानों और जवाहिरात के छिपे हुए खजानों की ओर न जाकर वह सबसे पहले किले की उस दीवार की ओर गया जिसके एक भाग को उसके सैनिकों ने उड़ा दिया था ! परन्तु जो जादू के जोर से पाँच छः घण्टों में ही अपने स्थान पर पुनः खड़ी होकर शत्रु की आँखों में बिच्छू के डंक की तरह गड़ने लगी थी। आसफ खां यह देखकर स्तब्ध रह गया जब उसने देखा कि जिस स्थान से दीवार उड़ी है उसी जगह पर उत्साही तथा चतुर कारीगरों ने लकड़ी और बाँस की बल्लियां गाड़-गाड़ कर बाहर से उपलों और मिट्टी द्वारा मटमैली रंग की ऐसी स्वाभाविक दीवार खड़ी कर दी है कि असल और नकल में पहिचान कर सकना बिलकुल असम्भव सा हो रहा है। कदाचित् यही कारण था कि दीवार की मरम्मत हो जाने पर भी रानी ने दुर्ग में बन्द होकर लड़ने की अपेक्षा खुले मैदान में ही युद्ध करके शत्रु से निपटना अच्छा समझा।

सभी सेनापति दांतों तले उँगली दबाये उस नव-निर्मित रहस्यमय दीवार को देख रहे थे, सहसा प्रधान सेनापति आसफ खां के मुँह से निकला, 'रावसाहब ! इस देश में यदि तुम्हारा जन्म न हुआ होता और तुम्हारी जगह पर कहीं एक वीर नारायण बहादुर या अधार और पैदा हो गया होता तो आज गर्व से मस्तक ऊँचा करके चलने के बदले हम लज्जा के मारे मुंह लटकाये हुये यहां से दिल्ली की ओर लौटते और अपनी मनहस सूरत लेकर कम से कम मैं तो जहांपनाह के आगे जाने की हिम्मत उम्र भर न करता !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—सत्यपाल शास्त्री

दुष्टाचरणों का मुकाबला करो

ऋषि—दीर्घतमा
देवता—आत्मा

ओ३म्, अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमउक्तिं विधेम॥

यजुः ४० : १६

OM, AGNE NAYA SUPATHAA RAAYE ASMAANVIHWAANI DEVA VAYUNAANI VIDVAAN. YUYODHYASMAJJUHURAANAMENO BHOOYISHTHAAM TE NAMAUKTIM VIDHEMA.

पदपाठः

अग्ने। नय। सुपथा। राये। अस्मान। विश्वानि। देव। वयुनानि। विद्वान्। युयोधि। अस्मत्। जुहुराणम्। एनः। भूयिष्ठाम्। ते। नमउक्तिम। विधेम।

AGNE NAYA SUPATHAA RAAYE ASMAAN VISHWAANI DEVA VAYUNAANI VIDVAAN YUYODHI ASMAT JUHRUAANAM ENAH BHOOYISHTHAAM TE NAMAUKTIM VIDHEMA.

महर्षिः दयानन्द

(अग्ने) स्वप्रकाशस्वरूप करुणामय जगदीश्वर। (नय) गमय (सुपथा) धर्म्येण मार्गेण (राये) विज्ञानाय धनाय वसुसुखाय (अस्मान्) जीवान् (विश्वानि) अखिलानि (देव) दिव्यस्वरूप (वायुनानि) प्रशस्यानि प्रज्ञानानि। वयुनमिति प्रशस्यना०॥निघं० ३।८ प्रज्ञानामसु निघं० ३।९॥ (विद्वान्) यः सर्वं वेत्ति सः (युयोधि) पृथक्कुरु (अस्मत्) अस्माकं सकाशात् (जुहुराणम्) कौटिल्यम् (एनः) पापाचरणम् (भूयिष्ठाम्) बहुतमाम् (ते) तुभ्यम् (नमउक्तिम्) सत्कारपुरस्सरां प्रशंसाम् (विधेम) परिचरेम॥

अभिगमः

१. देव, DEVA=दिव्यस्वरूप, O, Divinely,

२. अग्ने, AGNE=स्वप्रकाशस्वरूप, करुणामय जगदीश्वर! O, Self illuminant, Kindl, God!

३. ते, TE—तुम्हारी, your

४. भूयिष्ठाम्, BHOOYISHTHAAM=बहुत-सी very much

५. नमउक्तिम्, NAMAUKTIM=सत्कारपूर्वक श्रद्धापूर्वक प्रशंसा, Praises with great respect and reverence

६. विधेम्, VIDHEMA=करते हैं, we do

७. विद्वान्, VIDVAAN=सबको जानने वाले आप, you who knows everything and everybody

८. अस्मत् ASMAT=हमसे, from us

९. जुहुराणम्, JUHURANAM=कुटिलतारूप, in the form of cunningness, crookedness

१०. एनः, ANAH=पापाचरण को, sinful deeds and behaviours

११. युयोधि, YUYODHI=पृथक् कीजिए, keep off

१२. अस्मान्, ASMAAN=हम जीवों को, us (souls)

१३. राये, RAAYE=विज्ञान, धन तथा वास (जीवन) सम्बन्धी सुख के लिए, for all ktinds of knowledge, riches and pleaures of life

१४. सुपथा, SUPATHAA=धर्मानुकूल मार्ग से, through the righteous path

१५. विश्वानि, VISHVAANI=सारे, all

१६. वायुनानि, VAYUNANI=प्रशस्त ज्ञानों को, commendable and blessed Sciences

१७. नय, NAYA=प्राप्त कराइए, enable to get

उपागमः

हे दिव्य, स्वप्रकाशस्वरूप, करुणामय जगीश्वर! हम अपने वचन और कर्म से आपकी बहुत-सी सत्कार एवं श्रद्धापूर्वक प्रशंसा करते हैं। सब कुछ और सबको जानने वाले आप हमसे कुटिलतारूप पाप को पृथक् कीजिए। हमें विज्ञान, धन तथा वास सम्बन्धी सुख के लिए धर्मानुकूल मार्ग से सारे प्रशस्त ज्ञानों को प्राप्त कराइए।

O, Divinely, Self-illuminant, kindly God! we do praise you a lot through our words and

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

reverence. O, Omniscient Lord ! you know everybody and everything. Keep off all sinful deeds and behaviours in the form of cunningness and crookedness. Enable us to achive all commendable and blessed seiences through the right path so that we may have all kinds of knowledge, riches and pleasures of life.

पाप और पुण्य

इस मन्त्र में परमात्मा को अग्नि शब्द से संबोधित किया गया है। अग्नि का अर्थ जहां ज्ञान सम्पन्न या ज्ञान स्वरूप है वहाँ उसका अर्थ आगे ले चलने वाला भी है। इसमें सबसे पहली बात तो यह है कि भक्त इस बात का संकल्प करता है कि मैं हमेशा तुम्हारी स्तुति और प्रशंसा करता हूँ और करता रहूँगा। 'परमात्मा की प्रशंसा करना' इसका वास्तविक अर्थ क्या है यह हमें देखना है। मान लिया जाए कि पुत्र अपने पिता की हर जगह जाकर प्रशंसा करता है, कीर्ति गाता है परन्तु उसका अपना आचरण इतना गिरा हुआ है कि समाज उससे घृणा करने लगता है। क्या ऐसे दुष्टाचरण वाले पुत्र के द्वारा की गई अपने पिता की प्रशंसा समाज में प्रभावकारी होगी ? शायद नहीं। अपितु संसार यह कहेगा कि बेटे का ऐसा आचरण है तो न जाने इसके पिता का कैसा होगा ? अथवा यह भी कह सकता है कि जो पिता अपने बेटे को ही नहीं बना सका वह क्या करेगा ? इसलिए परमात्मा की प्रशंसा केवल मौखिक रूप में पर्याप्त नहीं है। आज भगवान की स्तुति करने वाले उसके भजन गाने वाले उसका प्रचार करने वाले भक्तों के द्वारा उनके अपने व्यवहारों के कारण जो भगवान की बदनामी हो रही है वह किसी से अविदित नहीं है। दुनिया भक्तों के द्वारा गाए गये भजनों को सुनती है और भक्त की आवाज से झूम-झूमकर उनके स्वरों में लीन हो जाती है और परमात्मा की स्तुति और प्रशंसा से पूर्ण रूप में आप्लावित हो जाती है। परन्तु वही दुनिया जब उन भक्तों के व्यवहार को देखती है और उनके अपवित्र आचरण को देखती है तो उसका दिल खट्टा हो जाता है, और भगवान की प्रशंसा-स्तुति की वर्षा से जो उसका मन आप्लावित हुआ था वह सारी-की-सारी भक्ति श्रद्धा समाप्त हो जाती है और उसकी जगह घृणा ले लिया करती है। इसलिए वेद मंत्र में 'विधेम' शब्द का प्रयोग किया गया है। विधेम का अर्थ है विधान करें। और विधान करने का अर्थ है कर्म के द्वारा प्रमाणित करना। इस प्रकार स्तुति कहने से 'वाचा प्रशंसा' के साथ-साथ 'कर्मणा प्रशंसा' का भी समन्वय हो जाता है।

विधान करें इस वाक्य में एक और मूलतत्व हमें प्राप्त होता है। विधान उसे कहते हैं जिसमें कुछ योजना है, शासन है, नियम है और जो सार्थक है। इस प्रकार मैं यदि भगवान का भक्त हूँ और भगवान की स्तुति विश्व के समक्ष करना चाहता हूँ तो मुझे इसका विधान करना होगा। अर्थात् अपने जीवन को परमात्मा के समान ही पूरी तरह से योजनाबद्ध अनुशासित और नियमित बनाना होगा। यदि मेरे जीवन में शुद्धता नहीं है, सरलता नहीं है और मैं वाचा स्तुति करता हूँ कर्म सर्वथा शून्य है तो मैं जो प्रार्थना करता हूँ वह कभी पूरी नहीं हो सकती।

परमात्मा से पहली प्रार्थना तो यह की है कि हे परमविद्वान् परमात्मा आप हमसे दो चीजों को अलग करें, एक है कुटिलता और दूसरा है पाप। कुटिलता पाप इन दोनों में एक बहुत बड़ा अन्तर है। सबसे पहली बात तो यह कि कुटिलता स्वयं में पाप नहीं होता अपितु पाप का स्रोत होता है। कुटिलता का अर्थ है अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए बुरा रास्ता अपनाना या मन, वचन और कर्म का समन्वय न होना।

आज बहुत-से ऐसे ढोंगी भक्त हैं जिन्होंने बाहर के समाज को प्रभावित करने के लिए पवित्रता और भक्ति का मुखौटा लगाया हुआ है परन्तु उस मुखौटे के अन्दर एक अपवित्र दूषित और कलुषित व्यक्ति पनप रहा होता है। ऐसा व्यक्ति परमात्मा का वास्तविक भक्त कभी नहीं हो सकता। और चूंकि इनके द्वारा की गई स्तुति या प्रशंसा केवल वाणी के क्षेत्र तक सीमित रह जाती है और कर्म में नहीं जुड़ पाती इसलिए वह अपने जीवन के माध्यम से परमात्मा की स्तुति का विधान नहीं कर पाता। दूसरा अन्तर यह है कि कुटिलता समाज और सामाजिक व्यवहारों में संघर्ष रखती है। जब भी कोई व्यक्ति कुटिल होता है वह हमेशा दूसरे के प्रति एवं समाज के प्रति ही हुआ करता है परन्तु पाप अपने में भी सीमित रह सकता है। उदाहरण के लिए झूठ बोलकर दूसरे को नुकसान पहुँचाकर अथवा ढोंग करके अपनी स्वार्थ सिद्धि करना कुटिलता है जहाँ दूसरों की आँखों में धूल झोंकी जाती है। दूसरी ओर अपने मन, चित्त या बुद्धि को सशक्त न बनाना, संकल्पहीनता, मन में अनेकों दूषित भावना रखना जिनके द्वारा आत्मा पतन की ओर जाया करती है, वह सब पाप है। इसलिए इस मन्त्र में पमात्मा से व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों में हो सकने वाली दुष्टताओं को दूर रखने की प्रार्थना की गई है।

इस प्रसंग में एक विचित्रता यह देखने में आती है कि पृथक् करने के लिए जिस शब्द का उपयोग किया गया है वह है युयोधि' अर्थात् परमात्मा से वास्तव में यह प्रार्थना की जा रही है—हे परमात्मा आप विद्वान है हमें समझाइए, हमें बता दीजिए कि हम समझ सकें कि वास्तव में मेरी आत्मा के लिए कौन शत्रु है और कौन मित्र ? कौन-सी भावना कुटिल है। पाप क्या है ? मैं इन सब बातों को अच्छी तरह जान सकूं और उन शत्रुओं से मुकाबला ले सकूं। साथ ही आप मुझमें शक्ति दीजिए ताकि जब कभी इसका मुकाबला करने का समय आए मैं पराजित न होऊँ और इस पर विजय प्राप्त कर सकूं। इसी से एक और बात भी स्पष्ट हो जाती है। केवल प्रार्थना करने मात्र से कोई व्यक्ति पाप या कुटिलता से दूर नहीं हो सकता। यदि उसे इन चीजों को दूर करना है तो इनसे मुकाबला करना होगा। स्वयं खड़े होकर लड़ना होगा और जब कोई व्यक्ति इस तरह टक्कर लेने के लिए खड़ा हो जाता है तब भगवान् उसको अपने आप शक्ति दे

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भारत की भावी शिक्षा का स्वरूप

(लेखक—प्रो० प्रेम स्वरूप गुप्त—अध्यक्ष हिन्दी विभाग)

शिक्षा का लक्ष्य—मानव व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास ही शिक्षा का लक्ष्य है। मानव का व्यक्तित्व चार भागों में बाँटकर समझा जा सकता है।

(१) पहला अंग हमारा यह शरीर है शरीर का परिचय और शारीरिक विकास शिक्षा का प्रथम लक्ष्य है।

(२) मानव व्यक्तित्व का दूसरा अंग जिसको शिक्षित किया जा सकता है मन है। मन को शिक्षित करने का अर्थ है—मन को सुसंस्कार युक्त करना अर्थात मानव मन में सद्गुणों एवं उदात्त भावों की प्रेरणा करना।

(३) मानव व्यक्तित्व का तीसरा अंग बुद्धि या मस्तिष्क है। मस्तिष्क का विकास ज्ञान से होता है। अतः शिक्षा का तीसरा लक्ष्य मनुष्य को ज्ञान सम्पन्न करना है।

(४) मानव व्यक्तित्व का चौथा अंग हमारी आत्मा है। आत्मा का ज्ञान और आत्म-ज्ञान के पश्चात परमात्मा का परिचय यह शिक्षा का चौथा लक्ष्य है। यदि उपरोक्त मानव व्यक्तित्व के चारों अंगों का सम्यक् विकास हो जाय तो शिक्षा अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हुई ऐसा कहा जा सकता है। नीचे उपरोक्त चारों अंगों के विकास की दृष्टि से शिक्षा का क्या स्वरूप होना चाहिए इस पर विचार करते हैं।

(१) शारीरिक शिक्षा—शारीरिक शिक्षा के दो लक्ष्य हैं (१) शरीर का परिचय अर्थात शरीर विज्ञान। मानव शरीर की बनावट, उसके विभिन्न अंगों का परिचय उसमें सम्पन्न होने वाली विभिन्न शारीरिक क्रियायें। यह शरीर-विज्ञान का अंग है। विभिन्न स्तरों पर इसका पाठ्यक्रम बनाया जा सकता है। (२) शरीर को पुष्ट, बलिष्ट, निरोग एवं स्वस्थ बनाना शारीरिक शिक्षा का दूसरा लक्ष्य है। शरीर पोषण के लिए भोजन की आवश्यकता है। भोजन में किन तत्वों का होना आवश्यक है विभिन्न भोज्य पदार्थों में कौन-कौन से तत्त्व होते हैं, भोजन बनाने की वैज्ञानिक विधि क्या होनी चाहिए जिससे कि इन भोज्य पदार्थों में पाये जाने वाले आवश्यक तत्वों का ह्रास न हो। किस प्रकार के भोजन से कौन से रोग उत्पन्न होते हैं और विभिन्न रोगों को दूर करने के लिए किस प्रकार के भोजन की उपयोगिता है—आदि बातें भोजन विज्ञान का अंग हैं। शारीरिक पुष्टि के लिए दूसरी आवश्यकता खेल और व्यायाम की है। नियमित व्यायाम खेल, योगासन आदि का ज्ञान और अभ्यास शिक्षा का आवश्यक अंग माना जाना चाहिए। व्यक्तित्व के विकास की परख के अन्तरगत स्वस्थ, बलिष्ट, पुष्ट शरीर पर भी अंक दिये जाने चाहिए। और शारीरिक शिक्षा एवं अभ्यास दोनों ही बराबर महत्त्व की बातें समझी जानी चाहिए। शारीरिक शिक्षा के अन्तरगत ब्रह्मचर्य एवं प्राणायाम सम्बन्धी शिक्षा भी आवश्यक हैं। प्राणायाम के लाभ विभिन्न प्रकार के प्राणायाम और उन विधियों का परिचय एवं अभ्यास शिक्षा का अंग होना चाहिए। इसी प्रकार ब्रह्मचर्य के लाभ एवं वीर्य नाश से उत्पन्न होने वाली हानियों का भी एक पाठ में समावेश होना चाहिए।

(२) मानसिक शिक्षा—मानसिक शिक्षा का लक्ष्य मन को संस्कार युक्त करना है। इस शिक्षा के माध्यम साहित्य, सिनेमा रेडियो टेलीविजन तथा नाटक आदि हो सकते हैं। महापुरुषों की जीवनीयाँ एवं संस्कार सक्षम कहानियाँ इस दृष्टि से सर्वाधिक उपयोगी होती हैं। साहित्य की पाठ्य पुस्तकों का निर्माण इस लक्ष्य को दृष्टि में रख कर ही किया जाना चाहिए। देश प्रेम पारस्परिक सेवा परिश्रम शीलता, कष्ट-सहिष्णुता, स्वावलम्बन, वीरता दृढ़ निश्चय, पौरुष, पराक्रम आदि भावों को जानने वाले सुन्दर लेख मनोहर कवितायें एकांकी नाटक, कहानी उपन्यास आदि खोजकर पाठ्यक्रम में रक्खें जावें। इस उद्देश्य से चरित्र-निर्माण सम्बन्धी साहित्य के निर्माण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए और उसका उपयोग पाठ्य ग्रन्थों में किया जाना चाहिए।

(३) बौद्धिक शिक्षा—आज की शिक्षा में मुख्य भाग बौद्धिक ज्ञान का ही है किन्तु उसमें दोष यह है कि उस बौद्धिक ज्ञान के साथ व्यवहारिक-पक्ष पीछे छूट जाता है। गणित का ज्ञान जीवनोपयोगी व्यवहार-गणित पर आधारित होना चाहिए। इसी प्रकार विज्ञान की शिक्षा दैनिक जीवनोपयोगी व्यवहारिक विज्ञान से सम्बन्धित होनी चाहिए। माध्यमिक स्तर तक शिक्षा का लक्ष्य जीवनोपयोगी चहुँमुखी व्यवहारिक ज्ञान से छात्र को सम्पन्न करना होना चाहिए। उच्च कक्षाओं में विषयों का विशिष्ट ज्ञान और विशेष योग्यता की व्यवस्था की जानी चाहिए। व्यवहारिक पक्ष पर दोनों ही स्तरों पर आज की अपेक्षा अधिक बल दिया जाना चाहिए।

(४) आध्यात्मिक शिक्षा—भारत की सबसे बड़ी खोज आत्मा की खोज है। आत्मा का ज्ञान उपनिषदों से लेकर गीता तक तथा षड्दर्शनों से लेकर आधुनिक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विचारक अरविन्द, दयनन्द, विवेकानन्द आदि द्वारा रचित ग्रन्थों में दिया हुआ है। आत्मा अजर अमर और नित्य है, शरीर के मरने पर भी आत्मा मरती नहीं। उस आत्मा का ज्ञान और परिचय देना भारतीय विद्यार्थी के लिए अधिक कठिन नहीं है। आत्म ज्ञान के इस परिचय का प्रभाव उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व और चरित्र को प्रभावित करेगा। मैं अजर-अमर आत्मा हूँ यह ज्ञान होने पर युद्ध स्थल में लड़ने वाला सैनिक अधिक निर्भीकता पूर्वक लड़ सकता है। चोरी डाके आदि अाराध भी शारीरिक सुख भोग की सामग्री जुटाने के लिए किये जाते हैं। अपने स्वरूप का ठीक परिचय हो जाने पर शारीरिक भोगों की तृष्णा स्वभावतः ही कम हो जायेगी। फलतः सादा जीवन और उच्च विचार जीवन में दिखलाई देंगे।

जीवन का लक्ष्य आनन्द की प्राप्ति एन्द्रिक सुख से भिन्न है। आनन्द आत्मा का विषय है। बिना आत्म-ज्ञान के शान्ति और आनन्द प्राप्त नहीं हो सकता है।

आत्म-ज्ञान ही परमात्म-ज्ञान या ब्रह्मज्ञान का द्वार उन्मुक्त करता है। आत्म-ज्ञान के पश्चात् ही ब्रह्म विषयक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। आत्मा में जो गुण हैं, ब्रह्म में वही गुण चरम अवस्था में दिखाई देते हैं। आत्म-ज्ञान के पश्चात ब्रह्म ज्ञान की ओर भी विद्यार्थियों को संकेत दिया जा सकता है, जो अपनी रुचि और योग्यतानुसार उस दिशा में प्रगति कर सकते हैं।

सारांश यह है कि भारत की भावी शिक्षा का स्वरूप व्यवहारोपयोगी जीवनोपयोगी तथा सुन्दर संस्कृति से युक्त होना चाहिये। हमारे देश की शिक्षा हमारी प्राचीन संस्कृति के अनुरूप होनी चाहिए। शिक्षा के माध्यम से व्यक्तिगत चरित्र एवं राष्ट्रीय चरित्र का विकास होना चाहिये। विद्यार्थी में सद्गुणों का विकास होना चाहिये और उसके मन में उदात्त भावों और उन्नत विचारों का प्रादुर्भाव होना चाहिये।

इस शिक्षा की सफलता योग्य शिक्षकों पर ही निर्भर होगी। अतः चरित्रवान् योग्य शिक्षकों के निर्माण पर सबसे पहले ध्यान देने की आवश्यकता है। ◆

(शेष पृष्ठ ३६ का)

दिया करता है परन्तु पहल भक्त की ओर से होनी आवश्यक है। अर्जुन युद्ध करने के लिए तैयार हुआ, भगवान कृष्ण ने उसकी मदद की यह है 'युयोधि' का अर्थ। इसलिए भगवान का भक्त वह है जो कुटिलताओं से और पापों से मुकाबला करने के लिए हमेशा तैयार रहता है।

अगले मंत्र में परमात्मा से सही प्रकार के ज्ञानों को प्राप्त करने की प्रार्थना की गई है। परन्तु ज्ञान दो प्रकार का होता है एक प्रशस्त और दूसरा अप्रशस्त। इस मन्त्र में प्रशस्त ज्ञान को प्राप्त करने की प्रार्थना की गई है। पूछा क्या करोगे ? उत्तर मिला कि मैं ऐसा धन चाहता हूं ऐसी शक्ति चाहता हूँ जिससे समाज का हित कर सकूं। दूसरों को कुछ दे सकूं। लक्ष्य बहुत अच्छा है परन्तु केवल लक्ष्य के अच्छे होने से काम नहीं चलता उस लक्ष्य को पूरा करने के लिए साधन भी अच्छा होना चाहिए। असुन्दर और अपवित्र साधनों के द्वारा प्राप्त किया गया लक्ष्य सारहीन हो जाता है। इसलिए परमात्मा से कहा कि अच्छे रास्ते से धर्मानुकल मार्ग से इन ज्ञानों को प्राप्त कराओ।

इस प्रकार इस मन्त्र में भक्त की बहुत सुन्दर व्याख्या की गई है। संक्षेप में हम भक्त की परिभाषा देते हुए यह कह सकते हैं कि **भक्त वह है जो परमात्मा की वाचा और कर्मणा दोनों प्रकार से स्तुति करता हो और स्तुति के द्वारा संसार को प्रभावित करे, जो कुटिलताओं और पापों से लड़ने की सामर्थ्य रखता हो और हमेशा उनसे मुकाबला करने के लिए तैयार हो,** जो संसार के अन्दर ज्ञान विज्ञान प्राप्त करे और जीवन के सुख के लिए भरपूर सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करें परन्तु इस लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए कभी दुर्मार्ग का अवलम्बन न करे।

●

भय न किसी से मान....

यदि निश्चित है इष्ट पन्थ तो भय न किसी से मान !

स्वागत कर जीवन में आयें जितने भी संघर्ष,
क्योंकि यही तो देंगे तुझको पावनतम उत्कर्ष,

तप करके तू निखर स्वर्ण-सा, निज स्वरूप पहिचान !
यदि निश्चित है इष्ट-पथ तो, भय न किसी से मान !!

दायें-बायें झांक नहीं तू, पीछे मुड़ मत देख,
बस केवल निश्चित रख अपने, पद-चिह्नों की रेख,

पद की गति का, पथ की इति का, रख तू प्रतिक्षण ध्यान !
यदि निश्चित है इष्ट-पंथ तो, भय न किसी से मान !!

तेरी जय मानव की जय है, हार न कर स्वीकार
निज पौरुष से तोड़ नियति का दृढ़ता कारागार,

आत्म-चेतना से तू निर्भय पद को रख गतिवान !
यदि निश्चित है इष्ट-पंथ तो भय न किसी से मान !!

★

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सदानन्द जी, क्या समाचार है, आज तो आप के छुहारे हुए मुखमण्डल पर कुछ-कुछ गुलाबी बहार है। ऐसा लगता है कि कोई बड़ा मार्का मारा है या फिर सौभाग्य का चमक उठा सितारा है! खुद ही खुद मुस्कुरा रहे हैं, मन ही मन में फूल कर कुप्पा हुए जा रहे हैं। कुछ हमें भी तो बताइए, हमारी जिज्ञासा का भी शमन करते जाइए।"

"अरे भैया जिज्ञासानन्द, बात कुछ ऐसी ही है। घटना एक बड़ी उपलब्धि जैसी ही है। आज ऐसे महा-पुरुषों का दर्शन है पाया कि हमारे गमगीन-से रहने वाले मन के पतझड़ पर अचानक ही है बसन्त आया। मिला या पाया तो न कोई संपदा न धन। फिर भी नितांत प्रफुल्लित हो गया है हमारा मन।"

"सदानन्द जी, कुछ तो बताइए। यों ही किस्से को द्रौपदी का चीर न बनाइए।"

"जिज्ञासानन्द जी, तो सुनिए। आप भी प्रसन्न हो जाएंगे, मानसिक आनन्द पाएंगे। यों तो हमारा पड़ा है बड़े-बड़े भद्रजनों से पाला, किन्तु आज एक जगह गए थे। बैठे थे किसी धुन में। अनेक विचार आ रहे थे मन में कि तभी वहां दो सज्जन आए। जिन बन्धु के पास हम बैठे थे, उन्होंने उनसे कहा 'अच्छा, तो आप आज दोनों ही इकट्ठे पधारे हैं। धन्य भाग हमारे हैं। आप लोगों की प्रसिद्धि तो खूब सुनी है, किन्तु अभी तक यह निश्चय नहीं कर पाए कि आप दोनों में से कौन है बड़ा, जिसे प्रभु ने है फुर्सत के दिन घड़ा।" ये दोनों थे सज्जन। एक का नाम है जनकदास और दूसरे का है कनकदास। हम बीच में ही बोल उठे 'बन्धुवर, तनिक यह तो बताइए कि इनकी किस बात में है ख्याति। बता देते तो तनिक हमारी भी ज्ञान वृद्धि हो जाती।' हमारे मित्र बोले "सदानन्द जी, ये दोनों महान् हैं। इनका अपने क्षेत्र में अनोखा स्थान है।"

हमने फिर पूछा कि "आखिर कौन-सा है वह क्षेत्र; तनिक हमें भी तो बता दीजिए।"

हमारे मित्र बोले कि "न दान में है न धर्म मेंन उपदेश में न कर्म में किन्तु कंजूसी के क्षेत्र में इनका नहीं कोई सानी। अब इन दोनों में कौन बड़ा कंजूस है यह बुद्धि अभी तक नहीं जानी। आज हम चाहते हैं कि ये ही दें बता और जता। तनिक हमें भी लग जाए पता कि कौन है बड़ा; ऊंचे धरातल पर है खड़ा।"

हमने भी स्वर में स्वर मिलाया और फिर फर्माया, "अजी जनकदास जी और कनक दास जी, अपनी गुण-गरिमा स्वयं ही सुनाइए। हम स्वयं कर लेंगे फैसला। आप बोलिए तो भला।"

बस हमने जो कहा तो पहले बोल उठे कनकदास जो, "तो सुनते जाइए और फिर अनुमान लगाइए। सुनिए यह जो हमारे चरणों में चरणदास जी विराज रहे हैं, जानते हैं कि ये कितने पुराने हैं। जी ये हमारे परदादा ने खरीदे थे। हम तो ठहरे खानदानी। हमारी पीढ़ी दर पीढ़ी यही पहने जा रही है। ये आज तीन पीढ़ी बाद भी हमारे चरणों की शोभा बढ़ा रहे हैं। हमारी कंजूसी की गौरव गाथा गा रहे हैं। आप जानते हैं कि हम इन्हें कैसे संभालते हैं। हम नंगे पैर चलते हैं। यही हमारी रीत है। जब आप सरीखे किसी भद्रजन के घर में प्रवेश करते हैं तो दरवाजे पर पहुंचने के बाद इनमें अपने पैर धरते हैं। इसीलिए ये आज भी नए के नए हैं। क्या खानदानी कंजूसी की इससे बड़ी कोई मिसाल हो सकती है?"

तभी जनकदास का पारा हो गया गरम और वे बीच में ही बोल उठे—कानों में मिश्री घोल उठे। "यह भी कौनसी बड़ी बात है। मान लेता हूं कि इन्होंने तीन पीढ़ी से एक ही जूता चरणों में धारा है और नहीं लिया कभी नकद या उधारा है। पर ये हमें कहां पाएंगे। अब हम आपको अपनी खानदानी कंजूसी की गरिमा सुनाएंगे तो आप गद्‌गद हो जाएंगे।"

हमारे बन्धु ने बीच में ही जनकदास जी को टोका और बातचीत का सिलसिला दराज होने से रोका। कह उठे, 'जनकदास जी! आप भी तो अपनी कंजूसी का कारनामा सुनाइए। हमारा ज्ञान बढ़ाइए।'

जनकदास बोल उठे 'कनकदास जी ने अपने तीन पीढ़ो के जूतों का करिश्मा सुनाया, किन्तु यह नहीं बताया कि इन जूतों को किसी थैले में या जेबों में सम्भाल कर रखते-रखते कितनी जेबें घिसाई हैं। यह कोई बड़ा कारनामा नहीं। हमें देखिए, यह तो अकेले ही एक जोड़ी परदादा के जूतों का लाभ उठा रहे हैं, किन्तु हम हैं कि पूरे खान-दान को मोहन भोग, रसगुल्ले और इमरतियां खिला रहे हैं। किन्तु किसी को एक पैसा भी नहीं चुका रहे हैं।

"भला यह कैसे" हमने बीच में ही जनकदास जी को रोका और अचानक टोका। वह पुनः बोल उठे "बाई गाड! आप हमारे बच्चों से पूछ लीजिए। पड़ोस में कर लीजिए जांच। हमारे हरिश्चन्द्री सत्य पर नहीं आ पाएगी आंच। मामला यों है कि हमारे घर के नीचे है दुकान।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसमें बनाते हैं ला० मन्नाराम जी मिष्टान्न। जब रसगुल्ला बनता है तो हम उसे सूंघ लेते हैं बारी बारी। फिर छोटी सी मुनिया जाती है हमारी। करती है तारीफ तो मन्नाराम जी होकर मेहरबान। दे देते हैं एक रसगुल्ले का दान। फिर सभी लेते हैं चाख। कहिए है न हमारा कमाल। यही है और मिष्टान्नों के सेवन का भी हाल। अब आप ही बताइए कि कौन है बड़ा कंजूस। कर लीजिए फैसला। कौन है बड़ा और कौन है छोटा।"

हमारे मित्र ने कहा, "भाई जनकदास जी, आप ही लगते हैं बड़े।"

हमने भी ये दोनों महामति जब से देखे है तभी से मन गदगद हो गया है। देखे तो बहुत थे किन्तु इन सुघड़ सुजानों को देखकर तो हमने भी यह फिल्मी धुन बरबस गुनगुना दी "तुम सा नहीं देखा!"

"बस इसी पर हो रहे हैं खुश श्रीमान् सदानन्द। मिल रहा है आपको आनन्द। हमारा तो पड़ चुका है इन दोनों से भी बड़े से पाला। आपने तो कभी ऐसे किसी के सम्बन्ध में सुना भी न होगा लाला!"

"अरे भाई जिज्ञासानन्द, तनिक बताइए वह कौन से हैं चतुर सुजान, जिनका करना चाहते हैं आप गुणगान।"

"तो सदानन्द जी, सुनिए। हम एक बार गए थे महानगर। वहाँ हमने सुना था कि रहते हैं हजरत प्रखर। कंजूसी का उनकी सुन रखा था कमाल। अतएव अपने एक मित्र के परिचयपत्र को बनाकर ढाल, हम पहुंचे उनके निवास स्थान पर। हमारे पहुंचते ही बोले 'ओहो' तो आपको भाई धर्मदास जी ने हमारा पता बताया है। आइए, आइए, आप तो बड़ी दूर से आए हैं। धन्य है हमारा भाग्य कि आप सरीखे भद्र जन आए। अब आप कर लीजिए स्नान, फिर हो जाए कुछ भोजन आदि का सामान। हम आश्चर्यचकित रह गए। मन में सोचा धर्मदास जी भी कैसे विचित्र जन हैं। यह तो कंजूस नहीं, अपितु परम श्रेष्ठ सज्जन हैं। आते ही पूछ रहे हैं भोजन की बात। अतएव उनके निर्देशानुसार मन ही मन में मुदित होते हुए स्नान किया और उनकी अतिथिशाला में पहुंच भोजन का ध्यान किया।

हमें देखते ही बोले, लाला जी, चतुर सुजान, तो हो गया आपका स्नान। तो अब करेंगे आप भोजन। पर घर में रूखी सूखी खिलाने का भला क्या है प्रयोजन। कब कब आप सरीखे भद्रजन आते हैं। अच्छा तो यही है कि किसी अच्छे भोजनालय में चला जाए और वहीं पर कराया जाये आपको भोजन।

हमने सुना तो हम और भी चकराए। यह तो बड़े ही भद्रजन हैं, जिनके हमने दर्शन पाए। मन के लड्डू मन में लगे फूटने और हमने कह दिया 'जैसी आपकी इच्छा।

लाला जी ने कंधे पर चादर संभाली और हमें भी ले लिया साथ, पकड़ कर हाथ में हाथ, और घर से निकल पड़े। चलते चलते लगभग एक मील पहुंचे तो एक भोजनालय पर आए। वहां हमने किया प्रवेश और फिर बुलाकर बैरे को देने लगे आदेश कि दो थाली लाओ। किन्तु यह तो बताओ कि सब्जी है क्या-क्या? बैरे ने आलू, रायता, बैंगन, मटर, सीताफल आदि का सिलसिला सुनाया। वह बोल उठे, अच्छा यह तो बताओ कि सब्जी में प्याज होगा या नहीं। जब उसके मुख से निकला कि भला प्याज के बिना सब्जी में स्वाद कैसे आएगा तो सुनते ही लाला जी हमसे बोले "जिज्ञासानन्द जी, यहां भोजन नहीं हो पाएगा। कोई प्याज खाकर हमने धर्म भ्रष्ट करना है। चलिए कहीं और चलते हैं। वहां पूरी आदि खाएंगे।"

हमने सोचा कि लाला जी तो और भी अधिक कृपावान् हो गए हैं। अब तो इनके इरादे फूल के से परवान हो गए हैं। हमारी श्रद्धा और बढ़ गई।

लालाजी हमें लिए चल पड़े। हम पहुंचे एक हलवाई की दुकान पर। जाते ही दे दिया आदेश, भैया तनिक जोरदार पूरियां खिलाओ। फूली-फूली और हां तनिक यह तो बताइए कि इसमें जो लगा रहे हो घी, वह कैसा है जी।

हलवाई बोल उठा "बिलकुल शुद्ध है जी। इतना शुद्ध कि जितना गंगा जल।"

लाला जी चिहुंक उठे और कहने लगे "सदानन्द जी, हो गया कमाल। यह तो हमें रहा ही नहीं था ख्याल। आप हैं हमारे अतिथि। आपको ऐसा कुछ खिलाएं पिलाएंगे कि आप भी जन्म भर सराहेंगे। अब हमारे साथ थोड़ा और चलिए।" हमारा मन तो कुछ टूटा, किन्तु फिर आशा की एक और किरण फूटी कि शायद और भी कोई बड़ा मिलेगा पदार्थ। अतः आशा की डोरी पकड़े चल दिए।

आखिर लाला जी हमें दो फर्लांग ले गए। वहां बह रही थी गंगा की नील धारा। बड़ा ही मनोहर था नजारा। पहले स्वयं आगे बढ़े और गंगा जल आचमन किया और हमसे बोले, "यह है पावन गंगा जल, इसमें है सात पीढ़ियों को तारने का बल। तनिक आगे पग बढ़ाइये और आचमन करते जाइए।" हम भी चलते-चलते गए थे थक। कंठ भी रहा था सूख, भले ही सता रही थी भूख। अतएव गंगा जल का ही पान किया और फिर अपने भाग्य को कोसते चले आए। "बताओ सदानन्द, क्या तुम्हारे यह कंजूस इन लाला जी से भी बड़े थे।" सदानन्द हंसते-हंसते लोट-पोट हो गए और बोले, 'भैया, नहीं।"

—दिग्दर्शनानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज श्रद्धानन्द पथ, विदिशा में पं० भारतेन्द्र नाथ का जन्म दिवस

रविवार १४ मार्च को नियमित साप्ताहिक सत्संग के साथ ही पण्डित भारतेन्द्र नाथ जी के जन्म दिवस पर एक गोष्ठी आयोजित की गई। पण्डित जी के चिरायु होने की कामनाओं सहित नगर के गण्यमान्य नागरिकों ने दिए गये विषय (मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ—अपनी नजर में) पर अपने विचार व्यक्त किए।

प्रमुख वक्ता दैनिक "वीर अर्जुन" के संवाददाता तथा स्थानीय साप्ताहिक पत्र 'अमिताभ' के प्रधान संपादक भाई श्री अवध श्रीवास्तव थे। उन्होंने हृदय मन्दिर के स्तम्भ को न केवल आर्य जगत् किन्तु हिन्दी पत्रकारिता में निर्भीकता, अध्यात्म प्रधान सृजनशील साहित्य की उपादेयता तथा वेद और दयानन्द के संदेश को घर-घर में पहुँचाने की तड़प का सम्मिश्रण बताया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता आयुर्वेदाचार्य डॉ० विश्व बन्धु शास्त्री, प्रधान आर्यसमाज विदिशा ने की और अन्य आर्य वक्ता युवा नेता श्री देवेश आर्य तथा डॉ० महिपाल सत्यार्थी एवं श्री वी० वी० तिवारी एस० ए० टी० आई० विदिशा के वक्तव्योपरान्त डा० महिपाल सत्यार्थी (युवा प्रकाशक एवं लेखक) एवं सौ० मधुबाला के विवाहोपलक्ष्य में सफल दाम्पत्य जीवन के लिये भी कामना की गई।

समाज सेवी युवा इंजीनियर श्री प्रकाश सोनी, मंत्री आर्यसमाज विदिशा ने उपरोक्त कामनाओं के साथ अध्यक्षीय भाषण के बाद श्री भारतेन्द्र नाथ जी के कर्मठ, संघर्षशील और त्यागमय व्यक्तित्व को "जीवेम शरदः शतम्" के मन्त्रोच्चारण के साथ चिरायु होने की परम-पिता परमात्मा से कामना की।

उन्होंने पंडितजी की सफलता और उपलब्धि के लिये देवी पडिता राकेश रानी जी की निरन्तर क्रियाशीलता और विशाल हृदयता को बहुत अंशों में उत्तरदायी बताया। उन परिस्थितियों में जब किसी भी व्यक्ति का टूटना स्वाभाविक था, बहन जी के सम्बल ने ही उन्हें आर्य जगत् के सबसे बड़े प्रचारक-प्रकाशक होने तक पहुंचाया। अन्त में शान्तिपाठ और जयघोष के बाद कार्य-क्रम समाप्त हुआ।

सत्यार्थ प्रकाश : २००) सैकड़ा
ऋषि जीवन : १००) सैकड़ा
मंगाएं—बांटें।

जन-ज्ञान साप्ताहिक के संबंध में आवश्यक सूचनाएं

१. बिना किसी पूर्व घोषणा के हमने जन-ज्ञान साप्ताहिक का प्रकाशन १५ फरवरी से आरंभ कर दिया है।

२. जन-ज्ञान (मासिक) के सभी सदस्यों को जन-ज्ञान साप्ताहिक का सदस्य बना लिया गया है और उन का शुल्क जितने समय का मासिक का जमा था, उतने समय के लिए साप्ताहिक का मान लिया गया है।

३. जन-ज्ञान (मासिक) नियमित रूप से प्रकाशित होता रहेगा। उसका शुल्क भी १५ रु० ही रहेगा। पर जो पुराने सदस्य जन-ज्ञान (मासिक) भी मंगाना चाहें वे तुरंत हमें केवल १० रु० और भेज दें। हम १० रु० में उन्हें जन-ज्ञान (मासिक) का सदस्य बना लेंगे।

४. जन-ज्ञान (साप्ताहिक) का वार्षिक शुल्क २० रु० रहेगा। ६ मास का शुल्क १२ रु० होगा।

५. जन-ज्ञान (मासिक) के आजीवन सदस्यों को मासिक पत्र नियमित भेजा जाएगा। वे २० रु० भेजकर साप्ताहिक के सदस्य बन सकते हैं।

६. जन-ज्ञान (साप्ताहिक) का आजीवन शुल्क ३०१ रु० रखा गया है, पर अभी २५१ रु० भेजने वालों को साप्ताहिक का आजीवन सदस्य बना लिया जाएगा।

७. साप्ताहिक प्रति रविवार को प्रकाशित होगा और बुधवार को कार्यालय से भेज दिया जाएगा।

८. शुल्क भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या, पूरा नाम व पता कूपन पर स्पष्ट लिखें। साथ ही यह भी स्पष्ट लिखें कि आप साप्ताहिक, मासिक या अंग्रेजी जन-ज्ञान में से किसका शुल्क भेज रहे हैं।

९. जो व्यक्ति या आर्यसमाजें १२० रु० वार्षिक भेजेंगे उन्हें १० प्रति प्रतियां सप्ताह जन-ज्ञान साप्ताहिक की भेजी जाएंगी।

१०. साप्ताहिक में आर्यसमाजों के समाचार सादर आमंत्रित हैं।

११. सभी विद्वानों-कवियों की रचनाओं का भी हम स्वागत करेंगे।

—प्रबन्धक

अधिक से अधिक साहित्य बांट कर आर्य समाज का सन्देश फैलाइए !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—राकेशरानी

प्रभु की राह पर

★ ★ ★

ओं दिवो वा विष्ण उत वा पथिव्या महो वा विष्ण उरोरन्तरिक्षात् । उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा ।

पदार्थ :—(हे विष्णो) सर्व व्यापी परमेश्वर ! आप कृपा करके हम लोगों को (दिव्यः) प्रसिद्ध वा बिजुली रूप अग्नि से (वसुना) द्रव्य के साथ (आपृणस्व) सुखों से पूर्ण कीजिए और (पृथिव्याः) भूमि से उत्पन्न हुए पदार्थ (उत) भी (वा) अथवा (महः) महत्तत्त्व अव्यक्त और (उत) भी (उरोः) बहुत (अन्तरिक्षात्) अन्तरिक्ष से द्रव्य के साथ सुखों को (हि) निश्चय करके पूर्ण कीजिए (विष्णो) सब में प्रविष्ट ईश्वर आप (दक्षिणात्) दक्षिण (उत) और (सव्यात्) वाम पार्श्व से सुखों को दीजिये (त्वा) उस आपको (विष्णवे) योग विज्ञान यज्ञ के लिये पूजन करते हैं ।

भावार्थ :—सब मनुष्यों को योग्य है कि जिस व्यापक परमेश्वर ने महत्तत्त्व सूर्य भूमि अन्तरिक्ष वायु अग्नि जल आदि पदार्थ वा उनमें रहने वाले औषधि आदि वा मनुष्यादिकों को रच धारण कर सब प्राणियों के लिए सुखों को धारण करता है उसी की उपासना करें ।

व्याख्या—हे घट-घट व्यापी देव ! अणु २ को प्रेरणा देने वाले प्राण ! जीवन के दाता ! मङ्गलमय ! आपने हर प्राणी के कल्याण के लिए यह ब्रह्माण्ड रचा है। आपने सभी कुछ, सभी के लिए प्रदान किया है। हे सृष्टि चक्र के चलाने वाले ! आप अपनी विभूतियाँ हमें भी प्रदान कीजिए !

हे नाथ ! हमें पूर्ण कीजिए ज्ञान से, बल से, धन से, स्फूर्ति से, और विचारों से। हमें वह अलौकिक तेज दो, विद्युत् से पूर्ण, जो सृष्टि को आपकी राह पर चलाने में सहयोगी हो सके। हमारे दाएं, बाएं ऊपर नीचे चहुं ओर केवल आपका, आपकी भावनाओं का साम्राज्य हो, और यह साम्राज्य हमारे हर कष्ट को दूर करता हुआ, हमें यज्ञमय बना दे, योगमय बना दे, आपका ही बना दे, ऐसी अनुकम्पा करो स्वामी !

स्वामी ! सोचा था तुम अन्तर्यामी हो, घट-घट के वासी, सभी की, सभी बातों को जान, कष्टों को दूर करोगे, पर देव ! जब ज्ञान नेत्र खुले, तब पता चला कि यह सारा अन्धकार हमने अपने चारों ओर स्वयं ही फैला रखा है, कष्टों की ज्वाला स्वयं ही सुलगा रखी है, और देव आपके पथ से भटक कर, आज हमने जो पीड़ा उठा रखी है उसका परिणाम भी तो हमें भोगना ही पड़ेगा ।

फिर भी नाथ ! आज आपकी ही ज्योति को देख, आपकी गोदी में बैठने के लिए मन मचल गया है। इच्छा हो रही है आपसे सभी कुछ पाकर, आपका ही बन वह सभी कुछ पा लेने की, जिसे पाना ब्रह्माण्ड का सबसे बड़ा गौरव है, वैभव है। अशरण शरण ! दीनबन्धु ! सभी कुछ भूल आपकी राह पर चल पड़ा हूँ। तो कभी न कभी तो अन्त मिलेगा ही। आपकी प्रेरणायें मुझे ऊँचा उठाती रहेंगी ही। यह विश्वास मुझे उत्साहित कर रहा है। मेरी राह कठिन है । कठिनता सफलता में बदल जाए, इसी की प्रार्थना तो कर रहा हूं, अन्तर्यामिन् ।

निशा के पार, उषा की किरणें मेरा स्वागत करेंगी घोर चीत्कार के बाद मधुर संगीत मुझे उल्लासित हर्षित विभोर करेगा। कष्टों की ज्वाला के बाद प्रेम की गंगा में स्नान कर आनन्दामृत पान कर सकूंगा यह मेरा सपना है। इसे साकार करना ही होगा। अब तो चरण पकड़ ही चुका हूँ। भूल न सकोगे, जा न सकोगे दूर हृदय से यही सोच रहा हूं।

अर्चना हो !

आज उनकी अर्चना हो !

जो जले दिन रात हर पल, धर्म की ही याद में,
आज उनकी अर्चना हो ।

जा मिटे, आगे बढ़े, निज शीश हाथों में लिये,
घोर संकट में लड़े जो 'प्राण' पाने के लिये ।
आज युग के बाद उनकी दीप-मानस वंदना हो ।।
आज उनकी अर्चना हो ।

देख पाए जो नहीं आँसू किसी की आँख में,
एक भी सूखे न पत्ता, राष्ट्र की मधु शाख में,
ध्येय लेकर जो चले, वह चाल उनकी बन्द न हो ।
आज उनकी अर्चना हो ।

जो बने थे खाद जन हित, पुण्य मानवता रहे,
स्वप्न हों साकार सारे हम रहें या ना रहें ।
उन शहीदों के लिये प्रिय आज पावन अर्घ्य क्या हो ।
आज उनकी अर्चना हो ।

—राकेशरानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कुंवर सुखलाल आर्य मुसाफिर की सहायता कीजिए !

आर्यसमाज के लिए सारा जीवन अर्पित करने वाले सुप्रसिद्ध प्रचारक, जिन्होंने ५० वर्ष से अधिक तक वेदों का नाद गुंजाया, लगभग एक वर्ष से रोगी हैं।

उन का एक मार्मिक पत्र आया है—जिसे पढ़ कर रोना आता है।

क्या हम अपने कार्यकर्ताओं की इसी तरह उपेक्षा करते रहेंगे ?

हम आर्यसमाजों व धनी मानी व्यक्तियों से आग्रह करेंगे कि वे उदारता पूर्वक सहायता निम्न पते पर भेजें—

कुंवर सुखलाल आर्य मुसाफिर
P. O. अरनियाँ (बुलन्दशहर)

—आर्यसमाज महावीर गंज लखनऊ के श्री वीरेन्द्र जी प्रधान, श्री ओजोमित्र शास्त्री मंत्री, श्री शान्तिप्रसाद जी कोषाध्यक्ष, श्री लाड़ली प्रसाद जी पुस्तकाध्यक्ष चुने गए।

—आर्यसमाज मुजफ्फरपुर के श्री रामगोपाल आर्य प्रधान, श्री ओम्प्रकाश ब्रह्मचारी मंत्री, श्री शचीन्द्र कुमार पुस्तकाध्यक्ष चुने गए।

—आर्योपप्रतिनिधि सभा फर्रुखाबाद के श्री बाबूसिंह आर्य प्रधान, श्री मदनलाल जी मंत्री, श्री राजेन्द्र प्रकाश जी कोषाध्यक्ष निर्वाचित हुए।

आर्यसमाज सिलीगुड़ी का तृतीय वार्षिक अधिवेशन दिनांक २-३-४ अप्रैल को बड़े उत्साह के साथ मनाया गया जिसमें आर्य विद्वानों के प्रभावपूर्ण भाषण हुए।

—वेलीराम आश्रम चिल्ला रोड पटपड़गंज दिल्ली में एक औषधालय खोला गया है। निराश रोगी जवाबी पत्र भेज कर लाभ उठाएँ।

—ग्राम मंगरोप तहसील भीलवाड़ा, जिला भीलवाड़ा राजस्थान के माहेश्वरी समाज के करीब ४० परिवारों ने माहेश्वरी भवन मंगरोप में एक वार्षिक सभा का आयोजन कर सुधार सम्बन्धी निम्न प्रस्ताव पारित कर उन्हें कार्य-रूप में अमल में लाने का दृढ़ निश्चय किया है—

१. किन्हीं भी परिस्थितियों में कोई भी मृत्यु भोज नहीं कर सकेगा।

२. विवाह, शादी या किसी भी अन्य उत्सव में अंग्रेजी बाजा नहीं बजाया जा सकेगा। बरात चाहे ग्राम से बाहर जा रही हो अथवा बाहर से ग्राम में आ रही हो दोनों परिस्थितियों में बन्द रहेगा (इसकी जगह पर राजस्थानी ढोल का उपयोग कर सकेंगे।)

३. विवाह शादी में जो नुत (किसी बर्तन के रूप में) अब तक लड़की वाले की तरफ से बरातियों को वितरित की जाती रही है वह अब भविष्य में बन्द रहेगी यानी न तो ली ही जा सकेगी एवं न दी ही जावेगी।

४. विवाह शादी या किसी भी अन्य उत्सव में नाश्ता लेना व देना बन्द रहेगा, केवल चाय, दूध व पेय पदार्थ की छूट रहेगी।

५. आस-पास के पड़ौसी ग्रामों में अब तक शादी, विवाह, मृत्यु भोज व किसी अन्य उत्सव में भी भोजन करने सामूहिक रूप से जाते थे (जिसे हमारे मेवाड़ी भाषा में चौकी जीमना कहते हैं) वह अब भविष्य में बिल्कुल बन्द रहेगा, न तो बुलाया ही जावेगा एवं न जाया ही जावेगा।

उपरोक्त कार्यक्रमों के अमल में लाने में अगर कोई माहेश्वरी समाज का सदस्य आनाकानी करेगा या ढील बरतेगा तो उसके खिलाफ समाज अनुशासन की कठोर कार्रवाई कर सकेगा। दण्ड, जुर्माना भी दे सकेगा।

—श्रीयुत तपस्वी राम आर्य (नरकटिया गंज, पो० चम्पारण) की सुपुत्री कुमारी माधुरी का पाणिग्रहण संस्कार आर्यसमाज मल्लाही, चम्पारण के भूतपूर्व मंत्री श्री श्रद्धानन्द प्रसाद आर्य के सुपुत्र श्री दिनेश कुमार के साथ महात्मा आर्यभिक्षु (हरिद्वार) के आचार्यत्व में तथा पंडिता सावित्री देवी शर्मा (बरेली) के पौरोहित्य में १५ फरवरी को पूर्ण वैदिक रीत्यनुसार सम्पन्न हुआ। विवाह सर्वथा आदर्श तथा दहेज आदि की कुप्रथाओं से मुक्त था।

—आर्यसमाज व्यावर द्वारा महर्षि दयानन्द बोध दिवस बड़े उत्साह एवं धूमधाम से मनाया गया। इस शुभ अवसर पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये गये। दिनांक २८-२-७६ को प्रातः यज्ञ के उपरान्त मिडिल, माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक कक्षाओं की बालिकाओं की "समाज सुधारक महर्षि दयानन्द" विषय पर भाषण प्रतियोगिता कराई गई।

—आर्यसमाज सीसामऊ कानपुर के श्री पं० लक्ष्मण कुमार जी शास्त्री प्रधान, श्री जसवन्तराय मंत्री श्री सरदारी लाल जी कोषाध्यक्ष व श्री वेदमित्र जी पुस्तकाध्यक्ष चुने गए।

मुद्रक—प्रकाशक—संपादक पंडिता राकेशरानी द्वारा सैनी प्रिंटर्स, दिल्ली में छपा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जनज्ञान [साप्ताहिक]
*वेद मन्दिर, नई दिल्ली-५ ११ अप्रैल १९७६ रजिस्टर्ड नं० D-(C) 619
दूरभाष : ५६६२२९ सूर्यनगर कार्यालय-२०१५८४

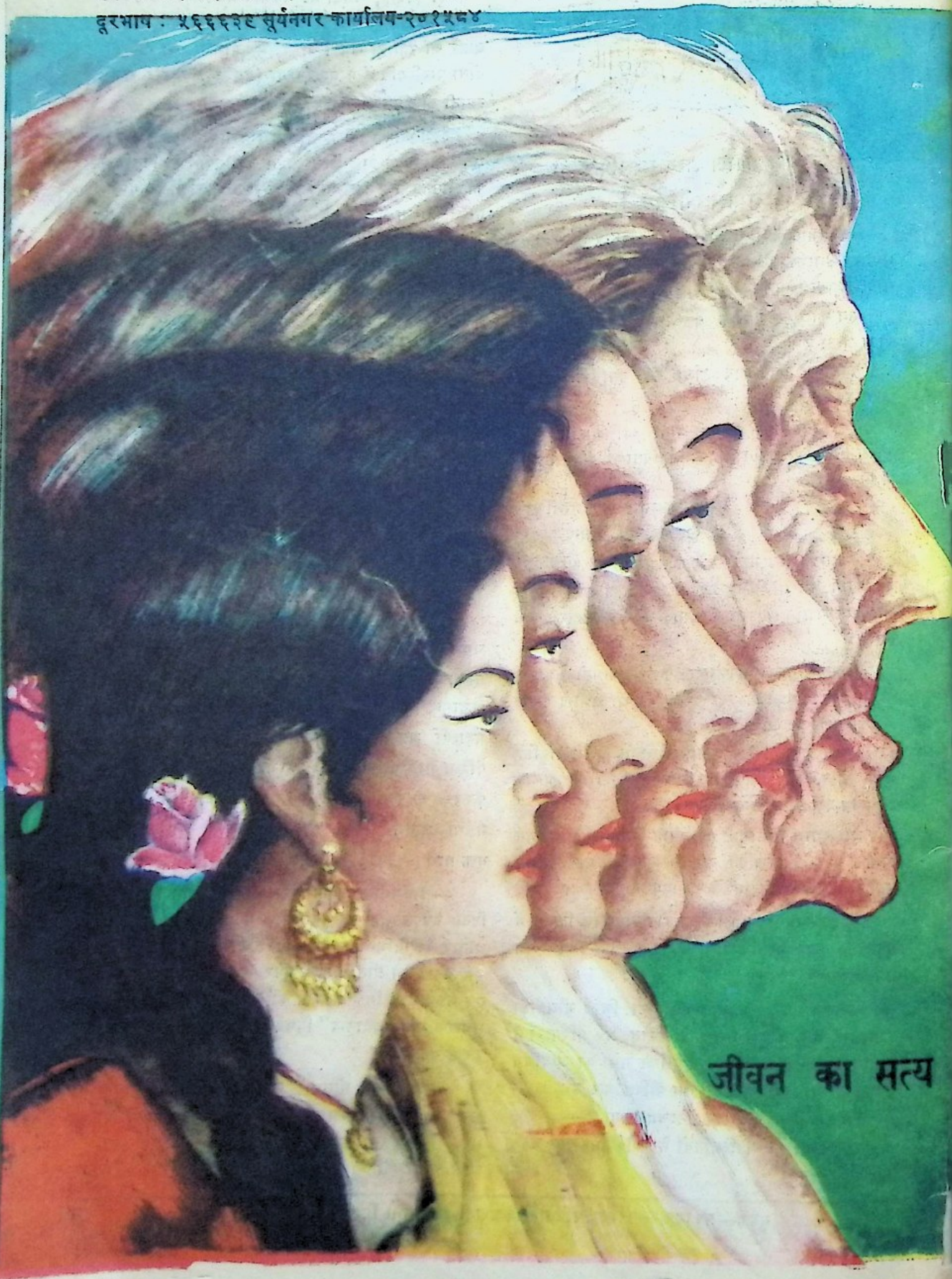

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi